दयाल संदेश

Dayal Sandesh

The Message of
Maharishi Shiv Brat Lal Verman

Book Two

Spiritual Growth

Those who are very unhappy, lost, full of doubts, and also wish to be rescued deserve these teachings.

- Maharishi Shiv Brat Lal Verman



दाता दयाल महर्षि शिव ब्रत लाल वर्मन

विषय सूची

<u>विषय</u>

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु गुरुर्देव महेश्वरः।
गुरु साक्षात् परब्रह्म तस्मैः श्री गुरवे नमः॥

शिव

वर्ष १२-कार्तिक सं. २०२३ वि.
नवम्बर १९६६-तरंग ९

चेतावनी

पुत्र पति सम्बन्धियों से, प्रेम का व्यौहार कर।
घर में रहकर हो भजन, और इस भजन से प्यार कर॥
पाया शुभ अवसर न इसको हाथ से खोना कभी।
मन की दुविधा मेट दे, निश्चय को अंगीकार कर॥
उठते चलते बैठते, सुमिरन रहे सत नाम का।
नाम में जीवन हो तेरा, नाम का परचार कर॥

भाग को अपने बढ़ाले, सिन्ध बून्द की गति परख।
बून्द हो सत सिंध ऐसे, प्रेम का विस्तार कर॥
राधास्वामी की दया ले, बन दया की मूरती।
शक्ति पाकर हो सुशीला, चित की दुचिता टार कर॥

भूमिका

शब्द में मृत्यु है, अर्थ में जीवन है; शब्द वस्त्र है, अर्थ आत्मा है; शब्द मिश्रित है, अर्थ एक है; इसलिये जो शब्दों के बंधन को परित्याग कर केवल अर्थ व आशय की ओर आकर्षित होते हैं, वह मृत्यु से बच कर जीवन के अंग संग हो जाते हैं।

जिसने किसी मनुष्य के केवल बाह्य वस्त्र को देख कर इसके असलियत के समझने का अभिमान किया, वह सदैव मूर्ख और अनभिज्ञ बना रहा, परन्तु जिसने कि वस्त्र के बखियों को उधेड़ कर आन्तरिक रूप का साक्षात्कार कर लिया वह आनन्दित हो गया। संसार के रूप सदैव धोखा देते रहते हैं। कारण यह है कि ये चिरस्थायी नहीं हैं। जो आज है कल न रहेगा, जो इस समय दृष्टि के सन्मुख है वह दूसरे समय में कुछ का कुछ बन जायेगा। इस लिये इस परिवर्तनशील मंडल में रह कर कैसे किसी से आशा की जा सकती है कि

वह केवल लिफाफा मात्र के देखने से स्थायी रूप और असलियत का दृश्य देख सके।

इस परिवर्तनशील मंडल में हमको अवसर मिला है कि हम उसके चक्कर करने वाले पहियों में घिस कर खराद पर चढ़ने वाले लट्टू की तरह स्वयं चक्कर खायें और फिर सुन्दर व पवित्र बन कर निकल आयें और संपूर्ण व समर्थ से मिल कर अपनी असलियत को समझ लें। यह हमारे जीवन का मुख्य उद्देश्य है। मनुष्य की उन्नति की अनेकों सीड़ियाँ हैं। उनमें एक शरीर की है दूसरी शक्ति की है, तीसरी बुद्धि की है, चौथी आत्मा की है जिसमें आत्मा, मादा पर विजयी हो कर अपने को इस से पृथक देखता है और पाँचवी जात है। तब इसको संपूर्ण समर्थ से मिल कर एकत्वाद अवस्था में आना पड़ता है। यह पाँचों आवश्यकीय हैं। इनमें से कोई भी परित्याग किये जाने योग्य नहीं है।

इन सब मंडलों तक हमारी गम है, क्योंकि वे वास्तव में हमारे ही लिये हैं। यदि हम चाहें तो सुगमता

से इन से संबंध जोड़ कर मुख्य उद्देश्य को प्राप्त कर सकते हैं। यदि सफलता नहीं होती तो उनका दोष नहीं किन्तु हमारा अपना दोष है।

अगले पृष्ठों में इन्हीं पाँच मित्र मण्डलों की पाँच भण्डार के नाम से उनकी विशेषताओं का पृथक पृथक वर्णन किया गया है। जो ध्यान पूर्वक पढ़ेंगे और शब्दों के बंधन में न फँस कर मुख्य आशय की ओर दृष्टि रखेंगे, केवल वह असलियत (सार-तत्व) को समझेंगे, दूसरे न समझ सकेंगे।

शिव

आत्मिक उत्कर्ष

लक्ष्मी भंडार

साहब के दरबार में कमी वस्तु की नाहिं।
बंदा मौज न पावहीं, चूक चाकरी माहिं॥

मंसूर ने हक कहा, दार पर खींचा गया। शम्श तवरेज ने सार-वस्तु का परदा उठा दिया, जान से मारा गया। सरमद ने उनमत्त अवस्था में आकर असली भेद की गवाही दी और शहीद (मारा गया) हुआ। परन्तु ऐ मनुष्य! इस संसार में तेरी जात सब से निराली है। तू ही पैदा करने वाला, मारने वाला और स्थिर रखने वाला है। तू अपनी निराली शान को नहीं देखता क्योंकि भ्रम का परदा पड़ा हुआ है। तुझको अपने निज रूप का

ज्ञान नहीं है, क्योंकि माया और अविद्या ने घेर रखा है जिसका भी मुख्य कारण तू ही स्वयं है।

"खुद ब खुद आजाद बूदी खुद गिरफ्तार आमदी।"

अर्थात्- स्वयं ही स्वतंत्र (मुक्त) हुये और स्वयं ही बन्धन में पड़े।

संसार में क्या बात है जो तू नहीं करता अथवा नहीं कर सकता, केवल समझने और समझ लेने की देर है। फिर प्रकृति की संपूर्ण शक्तियां तेरी ओर आकर्षित हो जायेंगी और तेरी बन्दगी का दम भरने लगेंगी।

ऐ मूर्ख मनुष्य! संभव है इस समय तू हमारी बात को न माने परन्तु तूने ही अपनी आकर्षण शक्ति द्वारा बड़ी बड़ी दिव्य शक्तियों को खींच कर अपने अधीन बनाया था। राम और कृष्ण का उत्पन्न करने वाला तू

स्वयं है और जिस को कलकी (कलंकी) अवतार कहा जाता है उसको तू स्वयं ही आवश्यकतानुसार समय पर उत्पन्न कर लेगा। आज तुझको मेरी बात की समझ नहीं आती परन्तु समय आ रहा है जब तुझको मानुषिक विकास तथा चमत्कार का साक्षात्कार प्राप्त होगा और तू समझ जायेगा कि यह बातें असत्य हैं अथवा सत्य और यथार्थ हैं।

मनुष्य की श्रेष्ठता का वर्णन किससे हो सकता है! देवता और फरिश्ते असमर्थ हैं। सरस्वती और ब्र्ह्मा तक कदाचित साहस न कर सकें। इसकी पहुँच बहुत दूर तक है।

बावजूदे कि परो बाल न थे आदम के।
पहुंचा उस जा कि फरिश्तों का भी मकदूर न था॥

अर्थात यद्यपि आदम या मनुष्य के पंख व बाल न होने पर भी यह उस स्थान पर पहुंच गया जहां फरिश्तों तक की गम नहीं थी। सारांश मनुष्य बड़े बड़े काम कर सकता है जो अन्यान्य के लिये असंभव हैं।

लोग कहते हैं तुम संसार का तमाशा देखो। वास्तव में यह संसार विचित्र व विलक्षण है। ईश्वरीय सृष्टि व कारीगरी का नमूना, इसका क्या कहना है! हिमालय सरीखा विशाल पर्वत कैसी सुन्दरता से खड़ा हुआ आकाश से बातें कर रहा है। इसके सिर पर बर्फ की चमकती हुई उज्ज्वल टोपी कैसी सुन्दर लगती है। सूर्य की किरणें इस से मिल कर इस प्रकार इन्द्र धनुष का मनोहर दृश्य दिखलाती हैं कि आँखों को आश्चर्य होता है। पहाड़ की तराई में कैसे सुन्दर व मनोहर फूलों के वृक्ष लगे हुये हैं। बरसात का मौसम है। सारा

पहाड़ हरा भरा दृष्टि गोचर होता है। ऐसा प्रतीत होता है मानों महान हिमाचल भड़कीला वस्त्र धारण किये हुये गोलार्द्ध के प्रधान शासक के रूप में खड़ा हुआ अपने विस्तृत राज्य का निरीक्षण कर रहा है। गंगा की धारें बह रही है। जिस समय पहाड़ की चोटियों से पानी की धार नीचे की ओर उतरती है, मस्त व झूमते हुये हाथियों की पंक्ति के खेल के दृश्य आँखों के सामने आ जाते हैं। यह सब सुन्दर हैं। इन सब की सुन्दरता में किंचित सन्देह नहीं है। कोई क्या देखे और क्या न देखे, ईश्वर की माया अपार है। जिस ओर दृष्टि जाती है उसी ओर विस्मय में पढ़ जाती है, परन्तु इस बाह्य जगत से कहीं अधिक विशाल, कहीं अधिक मनोहर और कहीं अधिक चित्ताकर्षक मनुष्य का हृदय है। हिमालय की ऊँचाई, पृथ्वी का विस्तार, यह सब उसके सामने तुच्छ हैं।

मनुष्य का हृदय क्या है? क्या कोई इसकी थाह पा सकता है? इसमें ब्र्ह्मा वेद पढ़ते हैं, इसमें बैठ कर विष्णु पालन पोषण कर रहे हैं, इसी में शिव त्रिशूल लिये हुये संहार के कर्तव्य का पालन कर रहे हैं। इसी में सारा ब्र्ह्माण्ड गुप्त है। इसी में समुद्र लहरें मारता है। इसी में आकाश अपने विस्तार का तमाशा दिखाता है। साराँश कोई क्या कहे! यह मानुषिक हृदय सब से अधिक विचित्र और सबसे अधिक आर्श्चयमय है, परन्तु मनुष्य भूलकर भी अपना व अपने दिल का तमाशा नहीं देखता।

ऐ तमाशा गाह आलम रूय तो।
तू कुजा बहरे तमाशा मी रवी !

अर्थात् तू ही संसार के सारे तमाशों का आविष्कारक है। फिर तू स्वयं किस तमाशे के लिये कहां जाता है।

क्या कभी तुमने अपने मन के साहस और शक्ति पर विचार किया है? जिसको परिमित और संकीर्ण समझते हो देखो तो सही वह अपरिमित और सर्व व्यापक को अपने भीतर प्रविष्ठ करने की आकांक्षी रहती है। तुम इसको परिमित और संकीर्ण समझो, मैं नहीं समझता। जिसमें इतनी शक्ति तथा विस्तार हो कि वह अपरिमित और सर्वव्यापक को अपने में समेटने का अभिमानी हो, उसको मैं कैसे परिमित समझूँ। इस मन के हजारों रूप हैं। जो कुछ है मनुष्य का मन ही है। यही अमीर है, यही फकीर है, यही राजा है यही रंक है, यही मुक्त है, यही बुद्ध है, यही शुद्ध है यही अशुद्ध है।

मन मोटा मन पातला, मन पानी मन लाय।
मन की जैसी ऊपजे, तैसे ही हो जाय॥

यही मन इस जगत का पैदा करने वाला है और प्रत्येक स्थान पर इसका विकास है। यह चाहे गरीब बना दे, यह चाहे अमीर बना दे। यह अपने में वासना उत्पन्न करके राग के आकर्षण से संसार की वस्तुओं को अपनी ओर खींच लेता है। यही धनवान हो जाता है। जब यह वासना को दूर कर देता है, कोई वस्तु इसके पास नहीं रहती। धनवान व निर्धन होना केवल हमारे और तुम्हारे मन की अवस्था पर निर्भर है। तुमने अपने को निर्बल और निर्धन समझ लिया निर्धन हो गये। तुमने अपने आपको शक्तिशाली विचार किया सारी शक्तियाँ तुम्हारे आस पास एकत्र हो गईं और तुम शक्तिवान हो गये। इस मन में आकर्षण की दो शक्तियां हैं जिनको राग, द्वेष कहते हैं। अंग्रेजी साईन्स में इन्हीं को 'सेन्ट्री पीटेल' और 'सेन्ट्री फ्यूगल' शक्तियाँ कहते हैं। वास्तव में

यह एक हैं, प्रकट करने के ढंग में भिन्नता है। जिस समय इन दोनो शक्तियों से काम लेने की योग्यता आ जाती है, फिर मनुष्य स्वयं हर प्रकार की शक्तियों का भंडार हो सकता है। इस प्रकार की शक्ति रखते हुये जब मनुष्य यह कहता है कि हाय! हम निर्धन हैं, हम दुखी हैं, दरिद्रता कष्टदायक है तो कितना आश्चर्य होता है। यह सारा दुख अविद्या और अज्ञानता का है। विद्या शक्ति है और अपने निज रूप की विद्या (ज्ञान) सब से महान् शक्ति है। सांसारिक विद्या का जानने वाला साधारण मनुष्यों से अधिक शक्तिशाली होता है। एक मनुष्य जिसको घोड़े पर चढ़ने का ज्ञान है और घोड़े की पीठ पर जम कर बैठना और लगाम को हाथ में रखना जानता है वह बहुत मनुष्यों से अधिक तीव्रगामी हो सकता है, बन्दूक व तोप रखने वाला कितने मनुष्यों

पर आधिपत्य रखता है। इस प्रकार के एक एक मनुष्य में हजार हजार मनुष्यों का बल होता है परन्तु इन सब से अधिक शक्तिशाली वह मनुष्य है जिसको आत्मा का ज्ञान है। इसी आत्मा के ज्ञान ने हनुमान को बजरंगी बना दिया था जिस पर किसी प्रकार के हथियार नहीं चल सकते थे। इसी आत्म-विद्या ने अगस्त्य को समुद्र व जल के भय से निर्भय बना दिया था। इसी आत्म-विद्या द्वारा ऋषि मुनि संसार के तख्तों को पलट सकते थे। इसी आत्मा के ज्ञान से कपिल ने सगर की संतान को जलाकर धूल व राख कर दिया था। वह विद्या अब नहीं रही और ऋषि संतान कुत्तों और गीदड़ों की अवस्था को प्राप्त हो गई। अज्ञान के घटा टोप अंधकार ने इतना पाँव पसारा है कि हाथ को हाथ नहीं सूझता। क्या अंधेर

की बात है, किन्तु अन्धेर की बात भी नहीं है। जहां अविद्या है वहां ही दुख है।

राम तेरी माया द्वन्द मचाये!

मनुष्य के निज रूप का ज्ञान अथाह सागर है। यह वेदान्त है। इसको एक दो विषयों में वर्णन नहीं किया जा सकता, परन्तु मनुष्य किस प्रकार अपनी दीन दशा को बदल सकता है, इसको हम साधारण शब्दों में इस समय समझाने का प्रयत्न करेंगे जिससे पाठकों की समझ में भली भाँति आ जाये।

यह संसार जिसको हम और तुम देख रहे हैं प्रकृति से बना है। जो कुछ दृष्टि में आता है, जो नहीं देख पड़ता, जिस को हम सोचते हैं जिसको हम सोच भी नहीं सकते वह प्रकृति है। वह सब में भरी है, चाहे कोई वस्तु बड़ी हो या छोटी हो, वह सब है वह सब में

है। और यदि हमारे पाठक हमको आज्ञा दें तो कहीं कहीं इस प्रकृति के लिये और अधिक उपयुक्त और सरल शब्द "लक्ष्मी" का प्रयोग करें। यह जगत जो तुम देख रहे हो, लक्ष्मी रूप है और इसको तुम लक्ष्मी का भंडार भी कह सकते हो।

यह प्रकृति भी अणुओं और परमाणुओं का रूप ग्रहण करती है। यह भी परमाणु आकर्षण शक्ति के प्रभाव से मिल कर विशेष रूप में ढल जाते हैं और यही विशेष रूप धारण करने वाले परमाणु केन्द्र बनकर दूसरे परमाणुओं व अणुओं को अपने आस पास खींचते रहते हैं। यह सृष्टि जो तुमे देख रहे हो परमाणुओं से बनी हुई है।

मनुष्य, पशु, खनिज पदार्थ, वनस्पति सब परमाणुओं अर्थात् अणुओं के भंडार हैं। इन परमाणुओं

द्वारा बने हुये रूपों में सब से अधिक सुन्दर, सबसे अधिक श्रेष्ठ सब से अषिक शक्तिशाली रूप का नाम मनुष्य है। वह आकर्षण का केन्द्र बन कर प्रत्येक वस्तु को अपनी ओर खींचे हुये है। लोग कहते हैं- सूर्य ने अपने सूर्य मण्डल के विस्तृत गोलार्द्ध में अपने आस पास के अनेकों गोलार्द्धों को खींच रखा है। इसी प्रकार मनुष्य भी जिस वस्तु को चाहता है अपने समीप खींच लेता है। वह सूर्य है और जिस शक्ति से वह आकर्षण का केन्द्र बन कर खींच सकता है वह उसका विचार मात्र है जो बिजली से अधिक तेज, प्रकाश से अधिक दीप्तमान और कौंधे से अधिक चमकीला है। सिद्धि का इच्छुक मंत्र जपता हुआ लक्ष्मी के दृष्टि न आने वाले भण्डार से सिद्धि और शक्ति के परमाणुओं को खींच कर अपने में मिलाता है। मंत्र और यंत्र वास्तव में कुछ नहीं हैं। उसकी

संकल्प शक्ति के दृढ़ करने और उसको वीर बनाने और निर्भयता से लक्ष्मी भंडार से परमाणुओं के खींचने के साधन मात्र हैं। वास्तविकता उसकी संकल्प शक्ति में है और उसके विचार और विचार शक्ति में है। जब संकल्प शक्ति बढ़ गई शक्तिशाली परमाणु उसके हृदय में समा गये। फिर वही मनुष्य सिंह के जबड़े को पकड़ कर फाड़ डालने का साहस करता है। एक मनुष्य में उच्च कोटि का साहस और उत्साह आ जाता है। यह रहस्य तुमको स्वास्थ्य, संपत्ति और सुन्दरता इत्यादि के विषयों में छिपा हुआ मिलेगा।

यदि किसी मनुष्य को अपने विचार, अपने हृदय, अपनी प्रतिज्ञा और अपने संकल्प पर पूरा विश्वास नहीं है तो समझ लो वह बीमार होगा, निर्धन रहेगा, दरिद्र रहेगा, जवानी में बूढ़ा देख पड़ेगा और संसार उसको

अपने पाँव का फुटबाल बना देगा। यदि उसको अपने बाहुबल पर विश्वास है यदि उसकी संकल्प शक्ति विशाल है, यदि उसके विचार उच्च हैं तो वह यदि स्वास्थ्य चाहेगा तो केवल अपनी संकल्प शक्ति द्वारा लक्ष्मी भंडार से स्वास्थ्य के परमाणु खींच खींच कर अपने शरीर के अंग संग बनाकर पहलवान हो जायेगा और डन्ड बल वाला देख पड़ेगा। यदि यह संपत्ति का इच्छुक है तो केवल अपने विचार की डोर से खींचता हुआ अपने पांव के तले लाकर डाल देगा। यदि वह सम्मान और प्रतिष्ठा की ओर ध्यान देगा तो विचार के नियम के अंतर्गत अपने में ऐसी अवस्था उत्पन्न कर लेगा कि संसार उसका सम्मान करने और उसके पाँव पड़ने के लिये बाध्य होगा। यही विचार मुअक्किल हैं, यही विचार जिन्न व फरिश्ते हैं यही विचार हमज़ाद और

छाया-पुरुष हैं। जो इस विचार के विज्ञान (साईन्स) को समझते हैं उनको समझाना सुगम है जो नहीं समझते उनको कोई क्या समझावे!

हमारे विचार ही वास्तव में पैदा करने वाले हैं। हम जिस ओर जिस प्रतिज्ञा को लेकर विचार धारा को पलट देते हैं उसी ओर नये नये रूप देखते हैं। प्रायः हम अपने विचार से बुरी अवस्था उत्पन्न कर लेते हैं जिसको हम देखना भी नहीं चाहते, परन्तु यह दोष किसका है! हम ही ने तो इनको पैदा किया। यदि दफ्तर का भयभीत कांपता हुआ बाबू किसी अच्छे अंग्रेज को निष्प्रयोजन अपने ऊपर क्रोध दिलाता है तो वह उस अँग्रेज का दोष नहीं है किन्तु उस डरपोक बाबू का है जो अपने मन से निर्बलता व क्रोध के विचारों को खींच रहा है। कहावत है- जो जैसा करता है वैसा पाता है।

हम कहते हैं जो जैसा चाहता है, वैसा पाता है क्योंकि चाहना भी एक प्रकार का करना है। पोरस सिकन्दर से पराजित हुआ। सेना भाग गई, वह निर्भयता से खड़ा रहा। सिकन्दर जो संसार का सब से बड़ा लुटेरा, सब से बड़ा डाकू था, जिस में दया नाम मात्र भी न थी, पोरस की अवस्था देख कर चकित हुआ। कहने लगा "तुम क्या चाहते हो? तुम्हारे साथ कैसा व्यवहार किया जाय?" उसने उत्तर दिया- "जिस प्रकार बादशाह बाइशाहों के साथ व्यवहार करते हैं।" और सिकन्दर ने विवश होकर उसको उसका राज्य लौटा दिया और उसका सम्मान किया। जो संसार में माननीय हैं उसका कारण यह नहीं है कि ईश्वर ने उनको माननीय बनाया किन्तु उनमें "सेल्फ रेस्पेक्ट' (आत्म सम्मान) है। यह अपना मान आप करते हैं और जहाँ जाते हैं, दूसरों के हृदय से सम्मान

के परमाणु निकल कर उनके हृदय को सहानुभूति देकर अंग संग हो जाते हैं। जो अपमानित हैं, उसको ईश्वर ने अपमानी नहीं बनाया किन्तु उसके हृदय में स्वयं अपमान के भाव भरे हैं। वह डरता है कमीना-पन की बातें सीखता है और जहाँ जाता है इस प्रकार के परमाणु उसकी ओर आकर्षित होते हैं और वह अपमानित हो जाता है। जो अपमानित न होना चाहे, उसका अनादर करने वाला कोई भी नहीं है। जो सम्मान कराना चाहता है संसार उसके पांव चूमने के लिये बाध्य हो जाता है।

मनुष्य की बाह्यावस्था उसकी मानसिक और मस्तिष्क की अवस्था का प्रतिबिम्बित चित्र है। आँखों को देखो पता लग जायेगा। मन में विचार धाराओं का कैसा प्रवाह है संसार का महान श्रेष्ठ आचार्य ढाई हजार वर्ष हुये उच्च स्तर से घोषित कर गया है कि “तुम जो

चाहते हो वही हो जाते हो|" और यह अक्षरशः सत्य है और इसी सिद्धान्त का दुहराना हम परम संत कबीर साहब की बाणी में पाते हैं जिसको हम किसी स्थान पर इसी लेख में लिख आये हैं|

मन की जैसी ऊपजे तसे ही हो जाये|

हम को कोई परिमित नहीं कर सकता| हम स्वयं सिकुड़ कर परिमित हो जाते हैं| यह प्रकृति का और लक्ष्मी भण्डार का अटल, नियम है जिसकी अपील नहीं है| हिन्दू आज के संसार में क्यों दुखी हैं? क्योंकि वह अपने विचार से दुख के परमाणु खींच रहे हैं| जात पात छूत का असली और साइन्टफिक सिद्धान्त न समझ कर आपस में एक दूसरे से घृणा करने लगे| लक्ष्मी भण्डार से घृणा के परमाणु इनकी ओर आकर्षित हुये| ब्राह्मण को क्षत्री से घृणा, क्षत्री को वैश्य से घृणा और वैश्य को शूद्र

से घृणा, फिर चारों को एक दूसरे से घृणा। चूंकि इन के मन मस्तिष्क में घृणा के भाव थे, अन्य स्थानों से भी घृणा की चर्चा होने लगी। सजाति सदैव सजाति को खींचते और मिलते हैं।

कुनद हम जिस बा हमजिस परवाज़।
कबूतर बा कबूतर बाज वा बाज़॥

अर्थात्- उत्तम से उत्तम मिले, मिले नीच से।
माटी से माटी मिले, मिले नीच से नीच॥

परस्पर घृणा करते हुये कैसे संभव है कि अन्य स्थान पर उनका सम्मान हो। हम संबंधियों को नष्ट करना चाहते हैं। चूँकि हमारे मस्तिष्क में नष्टता के विचार हैं, वह अनेकों ओर से नष्टता के भाव को लाकर पुष्टि प्राप्त करते हैं। सम्बन्धी तो नष्ट हो गये परन्तु यह कैसे बच सकता है, क्योंकि उसका हृदय विनाश

का केन्द्र बन गया। यदि जयचन्द पृथ्वी राज को नष्ट करके स्वयं नष्ट होने से नहीं बचा, तो आज कल के धूर्त धोखेबाज मुकद्दमा बाज और चालबाज हिन्दू, अपने पड़ोसियों को नष्ट करके कैसे नष्ट होने से बच सकते हैं। सिद्धान्त तो एक है, जो जैसा करेगा वैसा पावेगा।

हम कहाँ थे कहाँ आ गये भाई! क्षमा करना।

हां, कहना यह था कि हम जो चाहते हैं वही होता है और हम अपने विचारों से स्वयं प्रभावित हो जाते हैं। यदि इच्छा करने पर देखो कि उद्देश्य की पूर्ति नहीं हो रही है तो लक्ष्मी भंडार के नियम को न कोसो। अपने हृदय की तह में घुस कर उससे पूछो क्या कमी है? और वह तुमको स्पष्ट उत्तर देगा। विद्यार्थी को रेखा गणित नहीं आती। वह बाह्य रूप से प्रेम करता है। चाहता है कि सीखे परन्तु असफल रहता है कारण क्या

है? कारण यह है कि न तो प्रबल इच्छा है न इस ओर घना ध्यान है! मजाल क्या है कि मनुष्य लक्ष्मी भंडार से कुछ मांगे और लक्ष्मी उसकी न सुनें। लक्ष्मी भंडार में किस वस्तु की कमी है? किसी वस्तु की भी नहीं। सारा दोष अपने विचार का, अपने मन का, अपनी समझ बूझ का और अपनी संकल्प शक्ति का है। इसी कारण कबीर साहब बता गये हैं-

साहब के दरबार में, कमी वस्तु की नाहिं।
बन्दा मौज न पावहीं, चूक चाकरी माहिं॥

प्रत्येक प्रश्न का उत्तर तुम्हारे हृदय में है। जो काम करो मन की सारी शक्ति उस ओर लगा दो। वह काम तुम्हार जीवन और मृत्यु का प्रश्न बन जाये। फिर देखें तो सही कैसे सफलता प्राप्त नहीं होती। संसार में प्रत्येक वस्तु अधिक मात्रा में विद्यमान है। पहले तो

हमारी इच्छा ही नहीं है। दूसरे हम उसके लेने के भेद को नहीं जानते। यदि इच्छा होती तो वह भेद स्वयं तुमको ज्ञात हो जाता। जिस प्रकार गन्ने का पेड़ केवल इच्छा के जोर से आकाश से मीठे परमाणु खींच कर अपने शरीर में मिला लेता है और तृप्त हो जाता है तुम भी यदि चाहो तो कर सकते हो; क्योंकि तुम्हारा आहार भी इन्हीं परमाणुओं से बना हुआ है। परन्तु तुम अज्ञान के बस में ऐसे आ गये कि सीधे लक्ष्मी से अपना आहार प्राप्त करने के साधन तक को भूल गये और खेती व नौकरी के फेर में पड़ गये। सुनो कबीर साहब का एक पूर्ण शिष्य क्या सुनाता है-

अजगर करे न चाकरी पंछी करे न काम।
दास मलूका कह गये, सब के दाता राम॥

तुमने सांप को सीधे आकाश से आहार खींचते हुये नहीं देखा होगा। मैंने देखा है। आकाश मण्डल में उसके समीप पक्षी उड़ा जा रहा है विचार शक्ति की धार उसके नेत्रों से निकल कर पक्षी को अपनी ओर खींच लाती है और इस प्रकार वह अपना आहार पाता है। अपने घरों में शिकार करते हुये छिपकली को देखा। इसमें भी कितनी यह शक्ति है। इसी प्रकार यदि चाहो तो तुम भी केवल अपने विचार की शक्ति से सब कुछ अपने समीप एकत्र कर सकते हो। लक्ष्मी भंडार का नियम कठिन नहीं है। बड़ा सुगम और सरल है। मैं जब बरेली में रहता था उस समय भक्त लखपत नामक एक मजजूव फकीर (अवधूत, जो साधन छोड़ उन्मत्त अवस्था में रहता है) को देखा था, जो कभी नहीं नहाता था परन्तु उसका शरीर यद्यपि फटे पुराने कपड़ों के ढके

रहने पर भी स्वच्छ और निर्मल ज्ञात होता था; क्योंकि वह स्वछता के परमाणु, अपनी ओर खींच लेता था।

ईश्वर में न अत्याचार है न अन्याय है। उसकी दृष्टि में सब की अवस्था एक समान है। उसकी दात का हाथ प्रत्येक समय खुला रहता है।

फैलायेगा क्या कोई परवर दिगार हाथ।
बन्दे का एक हाथ है तेरे हजार हाथ॥

यदि हमको उसकी दात प्राप्त नहीं है तो यह उसका नहीं किन्तु हमारा अपना दोष होगा। मुस्कराती हुई लक्ष्मी हाथ में सारी सामग्री लिये हुये खड़ी है, तुम क्यों नहीं लेते? यदि तुमकों स्वयं लेना नहीं आता तो फिर उसमें ईश्वर का क्या दोष है। वह उनकी कैसे सहायता कर सकता है जो अपनी सहायता आप नहीं कर सकते। तुम एक हाथ फैलाओ, वह हजार हाथ से

देना चाहेगा। यहाँ तक कि तुम धन द्रव्य, मान प्रतिष्ठा शासनाधिकार की तहों में लोट पोट हो जाओगे। परन्तु आवश्यकता इस बात की है कि तुमको लेने की भी इच्छा हो।

सारा दोष हमारा है। हमारे जीवन परमित, हमारे विचार संकीर्ण, हमारी बुद्धि अल्पदर्शी, हमारा मस्तिष्क अन्धकारमय! इस अंधकार की अवस्था में हमको तो सूझता ही नहीं कि लक्ष्मी भंडार हमारे हाथ की पहुँच में है। शोक! अविद्या ने क्या किया! सिकुड़ते सिकुड़ते हम इतने सिकुड़े कि दरिद्रता, बीमारी वृद्धावस्था और मृत्यु ने हमको घेर लिया वरन आत्मा को न बीमारी होती है न दरिद्रता आती है, न वृद्धावस्था सताती है, न मृत्यु ही की आशंका रहती है। कहने को तो हम बहुत कह चुके परन्तु कुछ इस आकर्षण के रहस्य की भी व्याख्या कर

देना चाहते हैं जिसके द्वारा मनुष्य अनुकूल परमाणुओं को अपने मन और मस्तिष्क की और आकषर्ति करता है| यदि तुम किसी महात्मा के पास श्रद्धा लेकर जाओ तो तुम देखोगे कि वह प्रसन्न होकर तुम्हारे दुख या दर्द को भुला देता है| बात क्या थी, तुम्हारे श्रद्धा के विचारों की धार मस्तिष्क से निकल कर आस पास के विरोध करने वाले विचारों को दबाती गई| अनुकूल विचारों के परमाणुओं को पुष्टि मिली और उसने बराबर जारी रह कर उसे महात्मा के हृदय को स्पर्श किया है और वहां से श्रद्धा की अमृत धार को खींच लाई और तुम सुखी हो गये| इसी प्रकार जब तुम स्वास्थ्य के भावों को सोचोगे तो तुम स्वस्थ हो जाओगे| यदि बीमारी के भावों को सोचोगे बीमार हो जाओगे| यदि स्वास्थ्य और बिमारी दोनों के विचारों को सोचोगे तो एक मिश्रित अवस्था

उत्पन्न होगी जिसमें स्वास्थ्य और बीमारी दोनो रहेंगी। प्रत्येक वस्तु की प्राप्ति के लिये परमावश्यक है कि उस समय कम से कम सिवा इस एक विचार के और कोई विचार बीच में बाधक न हो। यदि ऐसा न किया जायेगा तो जीवन पूर्ण न बन सकेगा। इसी लिये तो योगी योगाभ्यास करते हैं।

"मांगो और तुमको मिलेगा। खटखटाओ और तुम्हारे लिये खोला जायेगा।" यह महापुरुष मसीह का कथन है और देखो कितना सच्चा है लक्ष्मी भंडार में इतनी अधिकता है कि तुम कभी सब के सब को नहीं ले सकते परन्तु न तुमको माँगना आता है न खटखटाना आता है और लक्ष्मी बेचारी व्यर्थ में कोसी जाती है। एक सूफी कहता है-

ता न गोरद तिफ़ल के जुबन्द लुबन।

ता न रोयद लाला के खन्दो चमन॥

अर्थात- जब तक बालक रोता नहीं माता की छाती में दूध नहीं उतरता। जब तक बाग में (एक फूल) नहीं खिलता वाटिका नहीं खिलती (सजती)।

मेरे मकान में एक बिल्ली ने बच्चा दे रखा है। मैं बहुधा देखता हूँ कि जहां इस बच्चे ने शब्द किया, बिल्ली दरवाजा खोल लाँघती हुई वहाँ आ मौजूद हो जाती है और उसको दूध पिलाती है। ठीक यही अवस्था लक्ष्मी माता की भी है परन्तु तुमको तो रोना भी नहीं आता।

संसार रोगी है, दरिद्र है; कंगाल है। खाने को रोटी और तन को कपड़ा नहीं जुड़ता, दुर्भिक्षि का कष्ट असह्य है। ताऊन ने बड़ी दुर्दशा करदी है।

ताऊन से इक तरफ है आफत बर्पा।

इक सिम्त है कहत से मुसीबत बर्पा॥
क्योंकर दिले मज़लूम न फरयाद करे।
जब चारों तरफ हो क़यामत बर्पा॥

बेचारा भारत सब से दुखी है। लोग कुत्तों की मौत मर रहे हैं। न कोई दवा देता है न चिकित्सा करता है। न किसी की सहिष्णुता का लाभ मिलता है। यह क्यों है? क्या स्वयं भारतवासियों ने यह अवस्था अपने में उत्पन्न कर ली? और हमारा उत्तर होगा- हाँ! इसका उत्तरदायित्व हम भारतवासियों ही पर है। इस क्रान्ति को तो देखो कैसी घनघोर घटा क्रान्ति की छाई हुई है। जहाँ वेदान्त का सिंह नाद करता हुआ जीवन का स्वर उच्च करता था, वहाँ के नन्हें नन्हें बालक इस सिंह को. निकम्मा समझ रहे हैं। इनके संकीर्ण मस्तिष्क को यह साहस है कि वेदान्त के ज्ञान को, शंकर के फिलसिफा को, गौतम बुद्ध के गूढ़ रहस्यों पर ठट्ठा और मखोल

करते हैं। चमगादड़ को सूर्य नहीं देख पढ़ता क्योंकि उसने अपने मस्तिष्क को इतना सँकीर्ण बना लिया कि प्रकाश के परमाणु इस ओर आकर्षित नहीं होते। कदाचित यदि अब भी ऐसे लोग उत्पन्न हो जायें जो आत्मा के आध्यात्मिक रागों को उसके राग में गाते हुये लोगों को अपने हृदय की अपार शक्ति का शुभ समाचार सुनावें और उसको क्रियात्मक रूप में लाने का आदेश करें। कदाचित! ऐसे महापुरुष फिर उत्पन्न हों जो हम से आकर कहें "उठो, जागो, जब तक निर्दिष्ठ स्थान तक न पंहुचों, कभी चैन न लो।" तो फिर हम में नया जीवन आ जाता।

जिस बालक ने माता की गोद को छोड़ दिया मारा गया। इसी प्रकार हमने अपना रूप न समझ कर लक्ष्मी की गोद का परित्याग कर दिया और कालचक्र ने

हमको कलह क्लेश का लक्ष्य बना लिया। जो गरीब हैं बीमार हैं और दरिद्र हैं उनके संबंध में सदैव ध्यान रखो कि वह मिथ्या विचार के शिकार बने हुये हैं। परम संत राय सालिगराम बहादुर ने एक बार कहा था- "पहिले मालिके कुल का दामन पकड़ लो और तुम को सब कुछ मिल जायेगा।" और यह बचन कितना सच्चा है। राजा के समीप रहने वाले को किस बात की कमी रहती है। तुम जो चाहो वह तुम्हारा हो सकता है परन्तु शर्त यह है कि इच्छा प्रबल हो, तुम में आकर्षण शक्ति प्रबल हो। यदि पवित्र बनना चाहते हो, हृदय में पवित्रता को स्थान दो। किसी महात्मा की सेवा व सत्संग में रहो। कुछ दिनों पीछे अपने आकर्षण की भावनाओं के अनुसार अपनी अवस्था में परिवर्तन देखोगे। यदि हृष्ट पुष्ट और स्वस्थ्य होना चाहते हो, स्वास्थ्य और पुष्टता की भावनाओं को

हृदय में स्थान दो। स्वास्थ्य जनों की संगति में बैठो उठो। थोड़े ही दिनों पीछे अपनी आकर्षण के भावनाओं के अनुसार अपनी अवस्था में परिवर्तन पाओगे।

यदि यह सब भी नहीं कर सकते तो जाने दो, सच्चे दिल से सच्ची कामना करो और थोड़े ही दिन बाद तुम केन्द्र बनकर उद्देश्य को अपनी ओर खींच बुलाओगे।

परन्तु ऐसा न हो तुम मेरी अन्तिम बातों के कारण मतिभ्रम में पड़कर हानि कर बैठो। इसलिये मैं तुमको स्पष्ट रीति से समझाता हूं कि मन में किसी बात की इच्छा उत्पन्न करना वास्तव में उन्नति का बीज बोना है विचार जब पकते पकते दृढ़ हो जाता है तो फिर अपने विकास के लिए मार्ग निकालने का इच्छुक होता है। प्रत्येक विचार क्रियात्मक रूप में परिणत होने की इच्छा रखता है और तब मनुष्य उसी के अनुसार

काम काज में लग जाता है और तब वह उसकी पूर्ति कर लेता है। यह एक नियम है जो अटल है।

केवल केन्द्र बनकर अपनी महान आकर्षण शक्ति से हम जिस वस्तु को चाहें खींच ला सकते हैं। सारा जगत हमारे विचारों का सम्मान करने के लिये उद्यत है। लक्ष्मी भंडार अपार व अनगिनत है। जिसको जीवन लेना हो वह उससे जीवन ले सकता है। जो राज चाहते हैं, उनकों राज मिलता है, जो भूखे हैं वह तृप्त किये जाते हैं प्यासों के लिए पानी, वस्त्रहीनों को वस्त्र, घायलों को मरहम, रोगियों के लिये औषाधि। यहाँ सब कुछ है। किसी बात की कमी नहीं है। इस लिये मेरे प्यारे पाठको! यदि तुम में से आज किसी का जीवन विशाल नहीं है तो मत घबराओ। लक्ष्मी भंडार के नियम का अध्ययन करो। कल तुम संसार में तारागणों की भाँति चमकते

हुये दृष्टि पढ़ोगे। तुम जो आज दुःखी हो, कुछ चिंता न करो। अपनी अपार शक्ति और अपने आत्मा की असलियत और मन की आकर्षण शक्ति को समझ बूझकर काम में लाओ, तुम्हारा दुख दारिद्र कल ही दूर हो जायेगा। तुम जो आज बंधन की बेड़ियों से जकड़े हुए हाय हाय कर रहे हो, कुछ चिन्ता न करो, केवल अपने रूप को पहचान लो। तुमको मोक्ष मिल जायेगा क्योंकि इस लक्ष्मी भंडार में सबके लिए सब कुछ है।

ईश्वर तुम्हारा कल्याण करे।

पार्वती भंडार

कथनी मीठी खाँड सी, करनी विष की लोय।
कथनी से करनी करे, तो विष से अमृत होय।
कथनी के सूरे घने, थोथे, बाँधे तीर।
प्रेम चोट जिनके लगी; तिनके बिकल सरीर।
कथनी बदनी छाँड कर, करनी से चित लाय।
नर को नीर पिलाये बिन, कबहूं प्यास ने जाया।

[कबीर साहब]

कहते हैं किसी गाड़ीवान की गाड़ी का पहिया मिट्टी में फँस गया। बैलों नें आगे बढ़ने से इन्कार कर दिया। वह अधीर होकर पृथ्वी पर बैठ गया और आकाश की ओर हाथ उठा कर रो रो कर कहने लगा- “ऐ सर्व शक्तिमान परमेश्वर। अब तेरा ही सहारा है। तेरा ही आसरा है दीन बन्धु! गाड़ी कीचड़ सें नहीं निकलती। दया करो

कि फँसा हुआ पहिया कीचड़ से निकल आवे और गाड़ी चल निकले।” वह इस प्रकार बहुत देर तक रोता रहा। अन्त में आकाश पर एक दिव्य रूप का देवता देख पड़ा और उसने क्रोध के आवेग में इस अपाहिज मनुष्य की ओर दृष्टि करके कहा- “मूर्ख। ईश्वर ने तो उसी समय तेरी सहायता की थी! जब तुझको हाथ पाँव दिये थे। क्यों नहीं पहिये में अपना कन्धा लगा देता है। व्यर्थ समय नष्ट करता हुआ ईश्वर ईश्वर कर रहा है। गाड़ीवान को देवता की बात सुनकर जोश आया और जिस समय उसने कड़क कर जुये में, अपना कन्धा लगाया, बैल भी खिलखिला उठे और देखो न केवल कीचड में फँसे हुये पहिये बाहर निकल आये किन्तु गाड़ी तेजी से निकल चली गाड़ीवान प्रसन्न हो गया और देवता उच्च स्वर से गाता हुआ आकाश की ओर उड़ गया।

मदद हक उनकी करता है, मदद जो अपनी करते हैं।

और यह अक्षरशः सत्य है।

संसार में हम तुम सब लोग पार्वती के पुत्र हैं। पार्वती के शब्दार्थ हैं- पर्वत वाली अथवा पर्वत के समान हठ करने वाली, जिसकी दृढ़ता के सामने संसार की विशाल शक्तियों को भी नतःमस्तक स्वीकार करना पड़ता है। कहते हैं जब पार्वती अभी बाल्यावस्था में ही थी, नारद ने हिमाचल से आकर कहा कि यह कन्या शिव जी से ब्याहे जाने योग्य है। यह शब्द पार्वती के हृदय में धंस गये और उसने शिव जी से ब्याहे जाने की इच्छा से तप प्रारम्भ किया। सूर्य की झुलसने वाली धूप उसको अपनी प्रतिज्ञा से न डिगा सकी। वृष्टि का जल मस्तक पर गिरकर चला गया परन्तु पार्वती ने स्थान नहीं छोड़ा। वन के पशु वनचर उस स्थान से होकर गये

परन्तु वह दृढ़ प्रतिज्ञा वाली देवी अपने स्थान से तनिक भी न टसकी।

पपिहा पन को न तजे, तजे तो तन बेकाज।
तन छाँड़े तो कुछ नहीं, पन छांड़े है लाज॥
पड़ा पपीहा सुरसरी, लगा बधिक को बान।
मुख मोड़े सुर्त गगन में, निकस गयों यों प्रान॥
चात्रिक सुनहिं पढ़ावहीं, आन नीर मत ले।
मम कुल ऐही रीति है, स्वाति बूँद चित्त दे॥
कबीर सीप समुद्र की, रटे पियास पियास।
और बूँद को न गहे स्वाति बूँद की आस॥
ऊँची जात पपीहरा, पठे न नीचा नीर।
के सुरपति को जाँचिए, के दुःख सहे शरीर॥

दृष्टि के सामने शिवजी का आदर्श विद्यमान था। इस आदर्श के विचार ने पार्वती को पार्वती बना दिया। ऐ पर्वत की रहने वाली माता! तेरे चरणों में बार

बार नमस्कार है। सप्त ऋषी इनको बहकाने के लिए आये। पार्वती ने कहा- मुझको तुम्हारी बात सुनने का अवकाश नहीं है, जाओ और कहीं जाकर अपने निराले दर्शन शास्त्र का व्याख्यान सुनाओ। मैंने यह जन्म शम्भु के लिए हार दिया। मुझको शिव के गुण व दोष देखने का समय कहाँ है! मैं अपने आदर्श को क्षण मात्र के लिये भी दृष्टि के सामने से पृथक नहीं होने देती और विवाह होने को होगा तो होकर रहेगा वरन् सारा जीवन कुवांरी बैठी रहूँगी।

प्रकृति की सूक्ष्म शक्तियाँ जो सप्त ऋषि कहलाती हैं, इस हठ, इस दृढ़ता और इस गंभीरता को देखकर चकित हो गईं और स्वयं जाकर शिव को विवाह करने के लिये बाध्य किया और पत्थर के समान दृढ़ प्रतिज्ञा वाली पार्वती शिव के साथ ब्याही गईं। हिम्मत क्या

नहीं कर सकती! हिम्मत और दृढ़ संकल्प के सामने हिमालय पर्वत को भी सिर सुकाना पड़ता है-

उललुज़मान दानिशमन्द जब करने पै आते हैं।
समुन्दर फाड़ते हैं, कोह से दरिया बहाते हैं॥

अर्थात् जब वीर और उत्साही पुरुष किसी काम के करने के लिये तत्पर हो जाते हैं तो व अथाह सागर को मथ डालते हैं और विकट पहाड़ों से नदी बहा देते हैं।

यह पार्वती की दृढ़ प्रतिज्ञा प्रशंसनीय थी परन्तु क्या तुमने सोचा समझा भी है कि पार्वती कौन है। शिव के बाम अंग में बैठने वाली उमा पार्वती कहलाती है। यह संपूर्ण शक्तियों की देवी है। इसमें सन्देह नहीं यह तामसिक है परन्तु तुम्हारा शरीर क्या है इसमें भी तम की अधिकता है। वह मैल है और स्थूलता है

जिसको पार्वती ने अपने शरीर से निकाल उससे हमारे और तुम्हार जेसे असंख्य पुत्र बनाये हैं। इस कठोर लोह समान पार्वती के दो प्रकार के पुत्र हैं- गणेश और स्वामिकार्तिकि। एक चूहे पर सवारी करता है। दूसरा मोर के पेखों पर बैठता है चूहे पर सवारी करने वाला अत्यंत सूक्ष्मदर्शी है, जो अपने वाहन की निवलता का विचार न करके उससे अधिकांश लाभ उठाने को उत्तेजित रहता है। दूसरा देवताओं की सेना का सेनापति बना हुआ हर प्रकार के स्वात्माभिमान और अपने मनमानी चलने के वशी भूत रहता है। इसका वाहन मोर है। संसार के समस्त मनुष्य जो शक्ति, बल, पोरुष का घमंड रखते हैं केवल दो भागों में विभक्त हैं। एक भाग, तो गणेश से, दूसरा सोमकार्तिकि से संबंध रखता है। पार्वती ने अपने इस पुत्र को श्रेष्ठता नहीं दी जिसको देवताओं की सेना

के सेनापति होने का अभिमान है, परन्तु गणेश जो बुरी सी वस्तु को अपने लाभ के रूप में परिणित करना जानता है सब में श्रेष्ठ है इसमें पार्वती का धैर्य है और इसी धैर्य ने माता की दृष्टि में श्रेष्ठ बना रखा है। और आप समझ लें कि जिसके अङ्ग संग माता का आशीर्वाद हो उसके लिये संसार में क्या दुर्लभ है!

जन्नत कि रज़ाय मादरानश्त।
अन्दर तहे पाय मादरानश्त।

अर्थात्, माता को प्रसन्न रखने में बैकुण्ठ है और उसके चरणों के नोचे बैकुण्ठ है अर्थात् माता की सेवा और उसको प्रसन्न रखना मुख्य है।

एक अवसर पर पार्वती नहा रही थी, गणेश को आज्ञा दी गई कि दरवाजे पर बैठो। कोई भीतर न आने पावे। संयोग वश शिव जी आये। गणेश ने भीतर जाने

से रोका और देवता भी चिंतित हुए। लड़ाई हो पड़ी, गणेश मारे गये। जब माता ने पुत्र के मरने का समाचार सुना हृदय में क्रोध की ज्वाला भभक उठी, पृथ्वी और आकाश थर्रा गये। कौन है जो पार्वती के क्रोध का सामना कर सकता! अन्त में गणेश फिर जीवित किये गये और दयालु माता ने इस बात पर देवताओं के अपराध को क्षमा किया कि सब से पहिले गणेश की पूजा की जाए। यह महान उपदेश हैं जो संसार में हमको सब से पहिले सीखना चाहिये। यहाँ देवताओं के सरदार का महत्व नहीं रखा गया किन्तु एक सेवक व गम्भीर स्वभाव बालक को असली प्रतिष्ठा व नेतृत्व प्रदान किया गया

सरस्वती दर कबूल फरमानस्त।
तर्क फरमा दलील हरमानस्त॥

अर्थात्- सम्मान और प्रतिष्ठा चाहते हो तो सच्चे सेवक बनों और सेवा करो| यदि आज्ञा का उल्लंघन करोगे तो सदैव भाग्यहीन और निराश रहोगे!

वास्तविक शक्ति तलवार में नहीं है न सेना के सेनापति में है असली शक्ति वास्तव में धीरता और काम में है| यह उपदेश हम पार्वती के दोनों पुत्रों से सीखते हैं|

परन्तु पार्वती क्या है? क्यों उसकी इतनी महिमा है? क्या कारण है कि यह स्त्री जाति में इतनी माननीय है? साधारण लोगों के लिये तो यह उत्तर है कि पावती शिवजी की स्त्री है जो कैलाश के शिखर पर अपने फकीराना भेष में रहने वाले पति के प्रेम का दम भरती है और क्षण मात्र के लिए उससे पृथक नहीं होती| चूँकि वह संसार में सब से अधिक पति उपासक है इसलिये उसका स्त्री जाति में इतना सम्मान है! यह सच है

कि स्थूल रचना में शिव और पावती के संबंध का चित्र ऐसा ही है परन्तु सूक्ष्म रचना में जहां प्रकृति की महान शक्तियाँ सूक्ष्मता से काम करती हैं वहां शिव और पार्वती पुरुष और प्रकृति कहलाते हैं| इनके संयोग से जो वास्तव में नाम मात्र है, दो प्रकार की सन्तान होती है जो गणेश और स्वामीकातर्कि के नाम से प्रसिद्ध हैं| गणेश के पास सिद्धि शक्ति स्त्रियों के रूप में हाथ बाँधे खड़ी रहती हैं परन्तु स्वामीकातर्कि का कोई स्त्री मुँह तक देखना अच्छा नहीं समझती|

इस संसार में पार्वती का वास्तविक रूप शक्ति का है और जितनी शक्तियाँ हैं चाहे वह अपने नाम और गुण के कारण कुछ ही क्यों न हों पार्वती के निकट या उसके निज रुप में आ जाती हैं| यह शक्ति वास्तव में काम करने में है यदि काम गंभीरता व दृढ़ता से किया

जाये। जो धैर्य व दृढ़ता से काम करते हैं उनको पार्वती के दात के स्रोत से हर प्रकार की सफलता के पदार्थ प्रदान होते हैं।

सफलता किसी देश, जाति या धर्म से सम्बन्ध नहीं रखती। यह न कहो कि चूँकि हमारा देश अच्छा है इस लिये हमको सफल होना चाहिये अथवा चूंकि हम सत्यता पर हैं इस कारण सफलता हमारे भाग्य में आवेगी। शिव पुरान में रक्त बीज राक्षस की लड़ाई से पहले पार्वती ने उससे कहा था कि- 'मैं उसकी हूं जो मुझ पर अधिकार पाने का भेद जानता हो।' इन शब्दों में दर्शानिक गूढ़ रहस्य विद्यमान है। पार्वती के दया भाव का अधिकारी केवल वह है जो पर्वत के समान दृढ़ व गंभीर हो पर जो किसी प्रकार की कठिनाइयों और आपत्तियों का विचार न करता हुआ रात दिन अपने

उद्देश्य की पूर्ति में तत्परता के साथ लगा रहे| पार्वती न रंग को देखती है न रूप को देखती है| न यह किसी के धर्म का सम्मान करती है न जाति और देश का इसमें पक्षपात है| जो इसके स्वभाव को ग्रहण करता है वह उसकी ओर मुस्कराती रहती है| जो उसके स्वभाव को ग्रहण नहीं करते यह उनकी ओर देखती तक नहीं और इसके ध्यान न देने से लक्ष्मी और सरस्वती भी इस पर दयालु नहीं हो सकतीं, क्योंकि पार्वती का नाम न केवल संसार की स्त्रियों की सूची में सब से पहिले आता है किन्तु देवताओं की स्त्रियों में भी सबसे पहिले है| तनिक विचार तो करो! यदि तुम में धैर्य व दृढ़ता नहीं है तो तुम सम्पत्ति और बुद्धि कैसे पा सकते हो! लक्ष्मी भंडार से सम्पत्ति लेने के लिये और सरस्वती भण्डार से विद्या लेने के लिये दृढ़ता और गंभीरता की सब से अधिक

आवश्यकता है। इसलिये यदि तुम पहिले पार्वती भंडार में प्रविष्ठ होने का प्रमाण-पत्र प्राप्त करना चाहते हो तो तुम में न केवल शक्ति आवेगी किन्तु तुम संपत्ति और विद्या से भी परिपूर्ण हो सकोगे वरन् इन दोनों से वंचित रहोगे।

पार्वती किस प्रकार के विशेषण अपनी सन्तान में देखना चाहती है? पहिले इसको हृदयांकित कर लो तब तुम हमारे आशय को भली भाँति समझ सकोगे। पार्वती चाहती है कि तुम में उत्साह हो, तुम साहसी और वीर बनो। परिस्थिति से लाभ उठाने की योग्यता प्राप्त करो और जहाँ कहीं परिस्थिति नहीं अपने लिये अनुकूल परिस्थिति उत्पन्न करने का उद्योग करो।

धन-धान्य, मान-बड़ाई और सफलता की प्राप्ति के लिये सब से पहली शर्त यह है कि मनुष्य असंभव

और कठिन का विचार कभी मन में न आने दे। मनुष्य ने जो कुछ किया है वह प्रत्येक मनुष्य कर सकता है। मन में यदि दृढता और गंभीरता है तो तुम स्वयं अपने लिये उत्तम अनुकूल परिस्थिति उत्पन्न कर सकोगे। हमारे स्वर्गीय चाचा लाला प्रयाग दत्त साहब कहा करते थे। स्वार्थ का गुण हमको गोबर से सीखना चाहिये। गोबर पृथ्वी पर जब पड़ेगा तब भूमि का कुछ न कुछ भाग अपने साथ अवश्य लावेगा। इसी प्रकार जिन में अपने काम का विचार दृढ़ता से हृदय में जम जाता है। वे अवश्य किसी न किसी अंश तक सफलता प्राप्त कर ही लेते हैं।

बात बनाना छोड़ दो, बातों के पकवान से पेट नहीं ही भरता। लच्छेदार भाषणों के उलझन में न पड़ो। प्रायः भाषण करने वालों को पेट की रोटी प्राप्त नहीं

होती। अवश्यकता केवल काम करने की है और काम करने में सदैव दृढ़ता और गंभीरता रहती है। उसमें तुमको पार्वती भंडार से सफलता प्राप्त करने का प्रमाण-पत्र प्राप्त होगा।

काम करने वाले यह कभी नहीं कहा करते कि हम उच्च वंशावली के हैं। संसार को तुम्हारी श्रेष्ठ वंशावली की ओर ध्यान देने का अवकाश कब है। वह न तो हमारा वंश वृक्ष (कुरसी नामा) देखना चाहता है। न तुम से तुम्हारे पूर्वजों की कहानियां सुनने के इच्छुक हैं। सम्भव है तुम्हारे बाप दादा अच्छे रहे हों। पार्वती इसको नहीं देखती आर इसलिये तुम भी इस झगड़े में न पड़ो। काम करने वाले केवल अपने काम की ओर दृष्टि रखते हैं। वह संपत्ति अथवा लक्ष्मी से आशीर्वाद नहीं मांगते कि हमारे घर में आकर वास करे किन्तु

पार्वती भण्डार से दृढ़ता और गंभीरता का सर्टीफिकेट प्राप्त करके उसको अपनी सेवा के लिये विवश करते हैं। वह हमारे पंडितों के समान सरस्वती की स्तुति पढ़ कर विद्वान बनने के इच्छुक नहीं होते किन्तु पार्वती की अटल दृढ़ता को पाकर परिश्रम और उद्योग से सरस्वती को अपना बना लेते हैं।

काम करने वालों को न किसी की शिकायत से प्रयोजन रहता है न किसी की प्रशंसा से। इनको तो केवल काम की धुन लगी रहती है। काम की धुन में लगे रहने के कारण इनको न तो ईर्ष्या करने वाले की ईष्या का खटका, न शत्रु की शत्रुता का भय, न मित्र की सहिष्णुता का विचार, न शत्रु के उत्पात की चिंता। यहाँ इन व्यर्थ बातों की किसको परवाह है। जो मन में ठन गई, ठन गई। जिस काम में लग गये लग गये या तो

इसको करके उठेंगे यो मर के उठेंगे। काम ही इनके जीवन और मृत्यु का प्रश्न हो जाता है और इस महान संकल्प शक्ति के सामने किसकी मजाल है जो थोड़ी देर के लिये भी सामने खड़ा हो सके।

हमारे देश में अब आवश्यकता केवल इतनी है कि लोग पार्वती भण्डार से काम करने की शक्ति प्राप्त करें और अपनी विचार शक्ति को व्यर्थ नष्ट न होने दें।

पार्वती भण्डार कोई कल्पित या मानी हुई वस्तु नहीं है किन्तु वह एक अस्तित्व है। तुम थोड़ा अपने हृदय को दृढ़ कर लो। जितनी दृढ़ करने वाली शक्तियों के परमाणु हैं स्वयं तुम्हारे हृदय की ओर आकर्षित होंगे, तुम में क्रमशः दृढ़ता आती जायेगी और तुम्हारा काम शानदार बनता जायेगा। मुख से कुछ न कहो, केवल काम करो और काम में लगो। इसी में सब कुछ है। जो

मनुष्य एक गज रुई का तागा पैदा कर सकता है वह स्वदेशी के विषय पर हजार लैक्चरों से कहीं बढ़कर काम करता है। जो खेत में एक मन के बदले सवा मन अधिक अन्न पैदा कर सकता है वह उस मनुष्य से अच्छा है जो एक दो पुस्तकें लिख डालता है।

काम करने से क्या फल मिलता है, इसकी व्याख्या में अंग्रेजी पुस्तक से अमेरिका के हवशियों की कुछ घटनाएं तुमको सुनाते हैं: -

सन् १६१९ ई० में २५ हब्शी बंदी होकर अफ़रीका से अमेरिका आये। उनकी अवस्था दास्तव की थी। विद्या बुद्धि के उन्नति करने का अवकाश नहीं दिया जाता था। यह १८६५ ई० तक बढ़ते बढ़ते ४० लाख तक पहुँच गये। उस समय उनकी स्वतंत्रता का ध्यान सभ्य देश में उत्पन्न हुआ। वह स्वतंत्र कर दिये

गये परन्तु न कहीं इनकी पाठशालाएं थी, न शिक्षक थे, न वकील थे। न डाक्टर थे, न महाजन थे, न साहूकार। अन्त में उनको अपनी उन्नति का विचार उत्पन्न हुआ और यह काम में लग गये। आज अमेरिका के यूनाइटेड स्टेटस में एक करोड़ से अधिक हब्शी हैं और लगातार परिश्रम व उद्योग का यह फल हुआ है कि पाँच सौ से अधिक इनके समाचार पत्र हैं। उन्नीस लाख से अधिक रुपए का स्थायी कोष शिक्षा के लिये एकत्र कर लिया है। उनकी १६० से अधिक पाठशालायें हैं। चालीस हज़ार हब्शी उच्च कोटि की शिक्षा पा रहे हैं। तीस हजार बालक बालिका व्यापार सीख रहे हैं। दस हजार से अधिक विद्या अध्ययन के कार्य में निमग्न हैं। दो लाख से अधिक बालक बालिकायें पाठशालाओं में पढ़ते हैं और तीस हजार हब्शी शिक्षक उनको जीवन व्यवहार की

शिक्षा दे रहे हैं। यूनाइटेड स्टेटस में इस समय ८०० से अधिक हब्शी डाक्टर हैं ६०० से अधिक वकील हैं। कितने करोड़पती, कितनों के बड़े बड़े कारखाने खुल गये हैं। कहा जाता है कि जापान के अतिरिक्त और किसी जाति ने इनके समान ऐसी उन्नति नहीं की। अब आप देखें हमारे देश की क्या दशा है। हम में दो प्रतिशत मनुष्य भी नहीं हैं जिनको वर्ण माला अक्षरों का बोध हो। न हममें काम करने का ढंग है, न हम अवसर उत्पन्न करना जानते हैं। हां यदि कुछ सीखा है तो यह अलवत्ता सीखा है कि गला फाड़ फाड़ कर दूसरों को बुरा भला कहना और आप हाथ पर हाथ धरे मक्खी मारते रहना। क्या हमारे जैसे मनुष्यों के भाग्य में कभी इस प्रकार काम करने से उन्नति का रूप प्रकट होगा।

आवश्यकता है लोग काम करें आवश्यकता है लोग धैर्य से काम लें, आवश्यकता है अपनी शक्ति का मुख वाणी द्वारा प्रयोग करें! रात दिन धार्मकि शास्त्रार्थ में लड़ते झगड़ते रहना! समझ न बूझ ब्र्ह्मा को पाठ पढ़ाने को साहस करना एकदम निरर्थक काम है| हमको चाहिये कि अपने प्राचीन ग्र्न्थों से धैर्य, दृढ़ता का उपदेश ग्र्हण करें| जिस मृतक कार्य को हाथ में लें उसमें जीवन का संचार कर दें| यह हमारा राष्ट्रिय गुण था जो दिन प्रतिदिन नष्ट होता जाता है| तुमको विदित होना चाहिये कि सगर की संतान से गंगा के लाने का उद्योग प्रारम्भ हुआ| वह मर मिटे| अन्शुमान ने वही काम करना चाहा उसको सफलता नहीं हुई| अन्त में भागीरथ की बारी आई| उसने कष्ट और परिश्रम उठाकर हजारों कोस से गंगा को आर्यावर्त को तृप्त करने के

लिये विवश किया। यह गंगा तुम्हारे पूर्वजों की कभी न मिटने वाली स्मृति है।

गंगा स्वयं पार्वती भंडार की सामग्री का एक अंश है और वह लोग जो जाति में जीवन का संचार करना चाहते हैं जिनको कुछ करना है वह निरर्थक बातों की ओर से हट कर पार्वती से अमृत की गंगा बहायें। जाति में धीरता, दृढ़ता और तत्परता का जीवन संचार करें और सब अपने समय पर होकर रहेगा। कबीर साहब का कथन है :-

करनी कारज ना लखे, कथनी कथे अपार।
इन बातों क्यों पाइये, साहब का दीदार॥
कथनी थोथी जगत में, करनी उत्तम सार।
कहें कबीर करनी सबल, उतरे भवजल पार॥
करनी बिन कथनी कथे, अज्ञानी दिन रात।

कूकर ज्यों भूषत फिरे, सुनी सुनाई बात॥

ईश्वर आशीर्वाद दे कि हम पार्वती भंडार से धैर्य, दृढ़ता और अटलता की दात प्राप्त कर काम में लगें। जिससे देश का उद्धार हो सके।

सरस्वती भंडार

गुरु पशु नर पशु त्रिया पशु वेद पशु संसार।
मानुष सोई जानिये, जाहि विवेक विचार॥

[कबीर साहब]

जिसने गुरु की महिमा और असली रूप को समझे बिना उसके नाम के महत्व और पक्षपात पर कमर बांध रखी है। वह गुरु पशु अर्थात् गुरु का जानवर है। जो मनुष्य की श्रेष्ठता मनुष्यता के गुण व उद्देश्य से परिचित हुये बिना किसी बड़े या छोटे व्यक्ति के साथ घनिष्ट संबंध रखता है वह (कुत्ते के समान) नर पशु है। जिसने स्त्री जाति की महिमा और विशेष योग्यता का ज़ान न रखते हुये किसी स्त्री के प्रेम के बन्धन को अपने गले का हार बना रखा है वह त्रिया पशु है। इसी

प्रकार जिनको वेदों के अर्थ और आशय से अनभिज्ञता है, जो यह नहीं जानते वेद क्या हैं, वेद का क्या उद्देश्य है और वेदों का हमारे साथ क्या संबंध है और निष्प्रयोजन गला फाड़ फाड़कर वेद वेद चिल्लाते हैं, वह वेद पशु हैं। मनुष्य वास्तव में वह व्यक्ति है जिसमें विवेक और विचार है, जो विवेक और विचार द्वारा किसी परिणाम पर पहुंच कर उसमें अपने अर्थ की सिद्धि की खोज करता है।

यह कबीर साहब की बाणी है। इसको कहे हुये लगभग छः सौ वर्ष हुये परन्तु वह जिस प्रकार सच्ची थी, वैसी ही आज भी सच्ची है। इसकी, सच्चाई के किसी अंश में किंचित क्षीणता नहीं आई है। मनुष्य को उच्च कोटि की प्रशंसा यह है कि वह सोच विचार से काम ले। शब्द "मनुष्य" जिस संस्कृत शब्द से बना

है, उसका अर्थ ही सोचना और विचार करना है और इसलिये ऊपर के दोहे में स्पष्ट रूप से व्याख्या सहित दिया गया है कि शब्द “मनुष्य” किसके लिये उचित घटता है।

मनुष्य वह है जो सोच विचार से काम करता है। यदि वह इस गुण से खाली है तो समझ लो कि वह मनुष्य के रूप में पशु है। मनुष्य और पशु में वास्तव में इतना ही अन्तर है वरन् खाने पीने, मिल कर रहने और विषय वासना का ज्ञान तो किसी अंश तक पशु में भी है। जानवर को खूँटे से बाँध दिया गया है। वह इस अवस्था को पसंद नहीं करता परन्तु वह यह नहीं सोच सकता कि मैं यहाँ, क्यों बांधा गया हूँ और किस लिये मुझ पर यह दुराचार उचित समझा गया है। मनुष्य विचार कर वास्तविकता का पता लगा लेता है। और फिर अपने

अनुभवों को विस्तृत कर स्वतंत्रता के साधन उत्पन्न कर लेता है। यही जो कुछ अंतर है हम मनुष्य और पशु में देखते हैं।

मनुष्य और पशु दोनों को बुद्धि की दात मिली हुई है। बुद्धि बनस्पति और खनिज पदार्थ तक में है। इसको असंभव न समझो। तुम वनस्पति और खनिज प्रदार्थ को बेजान समझ रहे हो, इस लिये तुम्हारी दृष्टि से वे बुद्धिहीन हैं परन्तु यह बात नहीं है। इन में भी जान है और वह जान रहित नहीं हैं क्योंकि इस सृष्टि का प्रकट होना प्रकृति और परमात्मा का संयोग बताया गया है। फिर सोचो तो सही कौन सा अणु है जो आत्मा से खाली होगा। इसलिये सब में आत्मा है और आत्मा प्रत्येक स्थान पर पूर्ण रूप से व्यापक है और विश्वास रखो जब सब में जान है तो सब में किसी न किसी

रूप से बुद्धि का होना आवश्यकीय है। प्रकृत्ति के सारे व्यवहार में देखोगे कि प्रत्येक वस्तु अपने असल की ओर अग्रसर रहती है। पानी पानी के भंडार में रहने का इच्छुक रहता है। वायु वायु मण्डल में लीन होना चाहती है। अग्नि अग्नि कुण्ड में प्रसन्न रहती है। अग्नि, जल, वायु तुम इनको आज जड़ कहते हो। कल एक ऐसा समय आयेगा जो इनको चैतन्य कहेगा। यह देवता हैं, यह चैतन्य हैं, यह दिव्य शक्ति वाले हैं। इनमें बल है, इनमें विवेक है और यही कारण है कि यह सदैव अपने असल की ओर अग्रसर रहते हैं।

पानी तहे खाक को रवां है।
लौ शोले की सूर्य आसमां है।

प्रकृति के तमाशाघर में प्रत्येक स्थान पर परदा पड़ा हुआ है वरन् उसकी चुलबुली सृष्टि तुम से साक्षात

बात चीत करती। फिर भी जो मनुष्य हैं और मानुषिक विशेषताओं से सुसज्जित हैं वह सोच समझ कर इस परदे को अपने हाथ से हटा देते हैं और मुस्कराते हुये कहते हैं:-

परदा को हटा दे कि तमाशा नजर आवे।
हर रंग में वह सूरते लेबा नजर आवे॥

परदा हट जाता है और प्रकृति की प्यारी प्यारी सृष्टि मनुष्य की ओर आकर्षित होकर इस प्रकार उसकी बलायें लेने लगती है जैसे स्त्रियाँ किसी राजकुमार के ऊपर धन संपत्ति निछावर करती हैं; क्योंकि वास्तव में यह प्रकृति का राजकुमार ही है और बुद्धि विवेक वाली सूरतें उसके सम्मान करने में अपना गौरव मानती और संतुष्ट रहती हैं।

मेरा तात्पर्य उन लोगों से नहीं है जिनकी बुद्धि अभी तक अनुभव के दर्जे को प्राप्त नहीं हुई। जो सार वस्तु को समझते हैं मैं केवल उनसे बोल रहा हूँ। वह सुनें और इस समय जो कुछ उनसे कह रहा हूँ उस पर ध्यान दें।

आकाश, वायु, अग्नि, पानी और मिट्टी यह सब जानदार हैं और बुद्धि विवेक वाले हैं। हाँ उनके बुद्धि मंडलों में अन्तर अवश्य हैं और यह अन्तर प्रत्येक स्थान पर तुमको प्रकृति में पग पग पर दिखाई देगा। यह सब अपने अपने मंडल में काम करते हैं और वह काम बुद्धि विवेक सहित हो रहा है।

जहाँ किसी का मंडल बंधेगा, वहाँ तुमको सदैव तीन अवस्थायें दृष्टि पढ़ेंगी। रूप, नाम और मंडल। दूसरे शब्दों में इसको इस प्रकार समझो- स्थान, धनी और

धनी का नाम। वैसे समझने के लिये तुम अपने शरीर को एक मंडल समझ लो। तुम्हारा शरीर स्थान है, तुम उसके धनी हो और तुम्हरा रूप उसका रूप है। नाम व नामी में अन्तर नहीं माना जाता इसलिये यहाँ पर हम इनको जान बूझ कर एक ही समझना चाहते हैं। अब सोचो जहाँ जहाँ अग्नि के परमाणु काम करते हैं, वह अग्नि का मंडल है। प्रकाश उसका स्वरूप और अग्नि देवता उसका धनी है। इसी प्रकार जहाँ तक वायु के परमाणु बिखरे हुये हैं, वह वायु के मंडल हैं। वायु इस मण्डल के धनी का नाम है और प्रकाश इसका स्वरूप है। इसी प्रकार आकाश के परमाणु, जहाँ तक समझ में आवें वहां तक इसका मंडल है, ब्र्ह्म (आकाश) इसका धनी है और प्रकाश इसका रूप है। जहां तक पानी के परमाणु फैले हुये हैं वह उसका मंडल है, वरुण देवता उसका धनी

है और प्रकाश इसका रूप है इत्यादि इत्यादि ये धनी अपने मण्डल में रहकर इस के संपूर्ण भागों के प्रबन्ध में इसी योग्यता से काम लेते हैं, जिस प्रकार ऐ मेरे पढ़ने वालो! तुम अपने शरीर के संपूर्ण मण्डलों को नियमित रूप में रखते हो; जिस प्रकार तुम अपने शरीर रूपी मण्डल में व्यापक होकर उसके समस्त अंगों की देख भाल करते हो, उसी प्रकार दूसरे में मण्डलों के धनियों की व्यवस्था है। इसमें किंचित मात्र संदेह को संभावना नहीं है और स्मरण रखो जहाँ नियम, प्रणाली, बनाव बिगाड़, काट छाँट राग व द्वेष इत्यादि का प्रबंध होगा, वहाँ बुद्धि अवश्य होगी और जिसमें जहाँ बुद्धि होगी उसको तुम जड़ कैसे कह सकोगे। जड़ और चैतन्य वास्तव में उपेक्षिक शब्द हैं।

यह अग्नि, जल, वायु देवता हैं और देवता बुद्धि वाले होते हैं। माना यह सब तुम्हारी सेवा करते हैं परन्तु उससे क्या? प्रकृति में प्रत्येक वस्तु इसी पवित्र व पुनीत कर्तव्य का पालन कर रही है और यह सब सामग्री केवल तुम्हारे लिये है जिससे तुम लाभ उठा सको।

तुम कहते हो हाय दुर्भिक्ष है, रोटियों का भी ठिकाना नहीं है। मनुष्य कुत्तों की मौत मर रहें हैं परन्तु क्या कभी तुमने सोचा है कि मनुष्य भी कभी मरते हैं। यह मरने वाले क्या मनुष्य हैं? मनुष्य तो वह महान् अस्तित्व है जिसके सम्बंध में कबीर साहब कह गये हैं :-

'मानुष सोई जानिये, जाहि विवेक विचार'

यदि मनुष्य बुद्धि से काम ले तो अग्नि से बिजली उत्पन्न करके धरती की पैदावार की शक्ति को बढ़ा कर

अधिकता से अन्न पैदा कर सकता है। हमारे पहले दो विषय यदि तुमने ध्यान पूर्वक पढ़े हैं तो ज़ात हो जाना चाहिये कि लक्ष्मी का भंडार बिल्कुल तुम्हारे पाँव के नीचे है। कौन सी वस्तु है जिसको तुम प्राप्त नहीं कर सकते हो। यदि वायु न हो तो तुम आकाश को वायु के लिये विवश कर सकते हो, यदि अग्नि न हो तो तुम वायु का मंथन कर अग्नि निकाल सकते हो। यदि पानी न हो तो तुम अग्नि के मंडल को मथ कर बना सकते हो। तुम्हारे लिये कुछ दुर्लभ नहीं है यदि तुम मनुष्य बनो और मनुष्य का उत्तम विशेषण यह है कि इस में बुद्धि हो।

इंसान की अक़्ल गर न हो गुम।
हो चश्म परी में जाय मरदुम॥

बुद्धिमान मनुष्य वास्तव में सारे ब्रह्माण्ड का हाकिम है। वह मालिक बनाया गया है। शासन करना उसका अधिकार है। कभी वह सिंह पर सवारी करता है। कभी हाथी के मस्तक पर शान के साथ बैठा हुआ दीख पड़ता है। कभी समुद्र की छाती को चीर कर उसमें से अपना मार्ग निकाल लेता है। कभी आकाश के बादलों पर बैठा हुआ सारे संसार के मालिक की हैसियत में देख पढ़ता है। अग्नि, जल, वायु, उसके आजन्म दास हैं। वह चाहे तो बात की बात में संसार को नष्ट कर दे। वह चाहे तो अपने लिये नई दुनिया बना दे। यह बला का पुतला है, खाक का पुतला नहीं है। कौन है जो उसकी बराबरी का साहस कर सके। एक हाथ से इसने आकाश की चोटी को पकड़ रखा है, दूसरे हाथ से पृथ्वी के सब से निचले भाग को छोड़ रखा है।

शेषनाग के मस्तक पर पाँव जमाये हुये आकाश पर सिर ऊँचा किये हुए कुंवर कन्हाई जैसे भाव व विशालता से नृत्य कर रहे हैं। अहा हा! होठों से बाँसुरी लगी हुई है। जो कोई इस प्यारी मुरली की ध्वनि सुनता है मोहित हो जाता है।

मुरलिया बाज रही कोई सुने
संत धर ध्यान॥
सो मुरली गुरु मोहि सुनाई,
लगे प्रेम के बान।
पिंडा छोड़ चली ब्रह्मण्डा, सुनी
अधर में अपूरव तान॥
पाया शब्द मिली हंसन से, खींच
चढ़ाई सुरत कमान।
यह बंसी सतनाम वंश की, किया अजर घर अमृत पान।
इत्यादि इत्यादि......

[हुजूर राधास्वामी]

यह मुरली मुझको प्रत्येक स्थान पर सुनाई दे रही है। इस मुरली धुन में मुझको अपनी असलियत का पता मिलता है।

बशुनों अज ने हिकायत भी कुनद।
अज़ जुदाई हो शिकायत भी कुनद॥
अज़ नेस्तो मरा बबीरी दो अंद।
अज़ नफीरम मर्दों जन नालीदा अंद॥
हर कसे कि दूरे मानद अज़ झसल ख्वेश।
बाग जोयद रोजगारे वस्ल ख्वेश॥

[मालोना रूम]

मनुष्य क्या है! मैं तुम से क्या कहूँ, यह सत्त पुरुष का सच्चा पुत्र है। जब से यह बुद्धि से काम लेता हुआ अपने असल व नसल (वंश) की समझ रखता है और मालिके कुल की बंदगी का दम भरता है तब तक प्रकृति उसकी आज्ञा का पालन करती है :-

अबरे बादो महव व खुरशेद फलक दर कार अंद।
ता तो नाने वकफ़ आरीव व गफ़लत न खुरी॥
ईं हमां बहर तो सर कुशतओ फ़र्मा बरदार।
शर्त इन्साफ़ न बाशद कि फ़र्मा न बरी॥
[शेख सादी]

यदि मनुष्य मनुष्य है तो कौन इसको अपना सेवक बना सकता है। किसमें शक्ति है कि उसके सामने मुँह करे। वह अपने हाथों से न केवल सिंह की कलाई फेर देता है किन्तु उसकी आंखें तक निकाल लेता है। ये जो पशुओं के समान खूँटे से बंधे हैं, जो लोभ व तृष्णा की घास को खा-खा कर जुगाली किया करते हैं, यह जो तनिक-तनिक बातों में डर के मारे मूत देते हैं, ये क्या मनुष्य हैं? न इनमें बुद्धि है, न विवेक है, न समझ है, न बूझ है। ये जानवर हैं और संसार ने इनका रूप समझ कर इनको खूँटे से बाँध रखा है और सामने चारा घास

डाल दिया करता है। मैं तुमसे बार-बार कहा करता हूँ और अब भी कहता हूँ। संसार में मानुषिक भावनाओं के सम्मान की सामग्री पग-पग पर है। तुम जो चाहते हो वही हो जाते हो। तुम जो सोचते हो वही बन जाते हो, यदि तुममें सोच विचार हो, यदि तुम में प्रबल इच्छा हो, परन्त तुम तो डर के मारे चूहे के समान बिल में घुसते हो। एक न एक दिन बिल्ली तुमको खा जायेगी, क्योंकि चूहा बिल्ली का आहार बनाया गया है। यदि तुम मनुष्य बनना चाहते हो तो सुनो, मैं तुमको प्रेम से सुनाता हूं :-

हिम्मत बुलंद दार कि पेशे खुदा व खुलक।
बाशद ब कदर हिम्मत तो एतबार तू॥

मनुष्य का उत्तम विशेषण यह है कि उसमें बुद्धि हो और वह बुद्धि के भंडार से सदैव कर लेने का आकाँक्षी रहे। गायत्री मंत्र है :-

ओ३म् भूः भुवः स्वः तत् सवितुः वरेण्यम्
भर्गो देवस्य धी महि धियो यो नः प्रचोदयात्।

इसमें ईश्वर से क्या माँग गया है। बुद्धि मांगी गई है क्योंकि यदि मनुष्य में बुद्धि है तो वह लक्ष्मी भंडार से संपत्ति और पार्वती भंडार से शक्ति प्राप्त कर सकता है। यदि बुद्धि नहीं है तो न संपत्ति प्राप्त होगी न शक्ति से काम ले सकेगा।

जिस स्थान से बुद्धि की संपत्ति मिलती है, प्रकृति के भंडार में उसका नाम सरस्वती भंडार है कदाचित यदि तुम थोड़ी देर के लिये कवि बन कर लक्ष्मी, पार्वती और सरस्वती के चित्रों पर विचार करते तो तुम उन्मत अवस्था में निमग्न हो जाते। लक्ष्मी क्षीर सागर में विष्णु के पास बैठी हुई पाँव दाब रही है। पार्वती हाथ में रक्त लगी तलवार लिए हुए सिंह पर अकड़ कर सवार

है और कैलाश पर विचर रही है। यह दोनों रूप कैसे चित्ताकर्षक हैं और किस प्रकार उनके रंग व रूप में मूल तत्व के अध्ययन कराने का प्रबन्ध किया गया है, परन्तु इन सब से अधिक सुन्दर दृश्य सरस्वती का है। हंस पर संवार, आकाश पर उड़ने वाली, वीणा बजाती हुई अपने रंग में मस्त है। लक्ष्मी तुमको विष्णु के चरणों तक पहुँचाती है, जहां अथाह पानी में हज़ारों फन वाला शेषनाग है और जहाँ विष और अमृत साथ साथ हैं। पार्वती तुमको शक्ति देकर शिव के चरणों की शरण प्रदान करती है, जहाँ राक्षसी भावनाओं और जहर हलाहल से काम पड़ता है। सारे शरीर से सांप लपटे हैं। भूत बेताल सब ही विद्यमान हैं। भयानक मैदान! कैलाश का ऊँचा टीला! बर्फ व बर्फ वृष्टि का भय! यह स्थान पार्वती का है। विष्णु यदि अथाह सागर में बसता है तो

शिव हिमालय की सबसे ऊँची चोटी पर बसता है। परन्तु सरस्वती कहां है! प्रसन्नता से मुस्कराती हुई आकाश में उड़ने वाले पक्षी पर सवार तुमको असली हैसियत प्रदान करती है जिसका गुण यह है कि दूध और पानी की परख की योग्यता रखता है। तुमको सरस्वती, बुद्धि विवेक प्रदान करती है। इसके भंडार से भाग पाये हुये लोग न लक्ष्मी के लालच से समुद्र में डूबने का भय करते हैं, न पार्वती के डर से बर्फ व वृष्टि में गल गल कर मर सकते हैं न्यूनाधिक से बचकर माध्यमिक अवस्था में रहकर वह शांति और आनन्द को प्राप्त होते हैं और मानुषिक भाव में आकर गाते हैं -

शन्नों मित्रः शम वरुणः
शन्नों भवत्वर्य्यमा।
शन्नों इन्द्रो बृहस्पतिः
शन्नों विष्णु रुरुक्रमः॥

तुम जिसको चाहते हो, यह तुम्हारे अधिकार में है। जिस आइडियल को जिस आदर्श को प्रिय समझो उसको ग्रहण करो।

तुमको मालुम होना चाहिये कि लक्ष्मी भंडार परिमित है। पार्वती का भंडार भी उपेक्षिक रूप से इतना लम्बा चौड़ा नहीं है परन्तु सरस्वती के भंडार का पारावार नहीं है।

सांख्यकार कहता है कि बुद्धि जो सरस्वती का विशेषण है, इस सृष्टि में पहला दृश्य अर्थात् महत तत्व है। इसी से और इसी में अहंकार और मन उत्पन्न होता है और इसी में आकाश, वायु, अग्नि पैदा होते हैं। जो कुछ है इस बुद्धि के पेट और इस वुद्धि के लपेट में है। यदि तुम्हारा थोड़ा ध्यान भी इस ओर हो जाये तो फिर मानी बन कर श्रीमान और शक्तिमान बन जाओगे

और सच्चे मनुष्य कहलाने का अधिकार प्राप्त कर लोगे। यदि इससे रहित हो तो फिर संसार में जुगाली करने वाले जानवरों के समान तुम्हारे साथ भी व्यवहार किया जायेगा और किया जा रहा है। फिर रोना झीकना कैसा! सुनो! मनुष्य बनो, बुद्धि से काम लो, ईश्वर पर भरोसा रखो! समय आयेगा जब तुम मनुष्यत्व के आकाश मण्डल पर सूर्य के समान चमकते हुये देख पड़ोगे।

ईश्वर तुम्हारा कल्याण करे।

विश्व भण्डार

धनवन्ते दुखिये सभी, निर्धन धन का रूप।
साध सुखी सहजो कहें, पायो भेद अनूप॥
ना सुख विद्या के पढ़े, ना सुख बाद विवाद।
साध सुखी सहजो कहें, लागी सुन्न समाध॥
जैसे संड़सी लोह की, छिन पानी छिन आग।
तैसे सुख दुख जगत के, सहजो तु तज भाग॥

[सहजो बाई जी]

मैंने लक्ष्मी भंडार के कारोबार को देखा, वाह वाह क्या कहना है आकाश बराबर मुँह खड़े किये हुये महल सरिता के तट पर खड़े हैं। इनका प्रतिबिम्ब पानी की गहराई में कैसी सुन्दरता से झकोले मार रहा है। महलों के इर्द गिर्द सुन्दर वाटिकायें लगी हुई हैं। फूलों की

सुगंध से मस्तिष्क बसा जा रह है। जहाँ तहाँ फब्बारे छूट रहे हैं। सुन्दर वस्त्रों से सुसज्जित नौकर चाकर बड़े ठाठ बाट से खड़े महल की सेवा में तत्पर हैं। खाने पीने की सब सामग्री उपस्थित है। भोग विलास के तमाशे हो रहे हैं। गान विद्या के दक्ष जिस समय अपना राग छेड़ते हैं एक समाँ बंध जाता है। महल के रहने वाले कैसे कैसे मनोहर वस्त्रधारी व सुन्दर मनुष्य हैं। इनके मुख मण्डल से कान्ति बरस रही है, वह हंस रहे हैं पान की लाली होठों पर विचित्र छटा दिखला रही है। अँखों से स्पष्ट है, कि अभी रंग महल से चले आ रहे हैं। इनकी रहन सहन, इनकी वेष भूषा और इनके सजे सुन्दर महल को देख कर मैंने चाहा कि ईश्वर से प्रार्थना करूँ कि तू यह सम्पत्ति मुझको प्रदान कर। मुझको भी लक्ष्मी का पुत्र बना दे। मैं भी सुख आनन्द का जीवन व्यतीत

करूँ, किन्तु अभी इस प्रार्थना के विचार ने क्रियात्मक रूप नहीं धारण किया था, शायद मन ही मन में यह बीज रूप में प्रकट हो रहा था कि नदी के दूसरी ओर किसी मधुर स्वर गाने वाले के गाने की भनक कान में पड़ी, वह मस्त होकर गा रहा था :-

क्या मांगू कुछ थिर न रहाई। देखत
नयन चलो जग जाई॥
एक लख पूत सवा लख नाती। ता
रावन घर दिया न बाती॥
लङ्का सौ कोट समुन्द्र सी खाई। ता
रावन की सुध नहीं पाई॥
सोने का महल रूपे का छाजा। छाँड़
चला नगरी का राजा॥
कोइ करे महल कोई करे टाटी। उड़
जाय हंस पड़ी रहे माँटी॥

आवत संग न जात संगाती। कहा
भयो दल बाँधे हाथी॥
कहैं कबीर अन्त की बारी। हाथ
झाड़ ज्यों चला जुआरी॥

वाणी क्या थी जादू था! कान में पड़ते ही दिल लोट पोट हो गया। चेतावनी का चित्त आँखों के सामने आ गया, संसार का वास्तव में यही परिणाम है। प्रत्येक प्रातःकाल सायंकाल में परवतर्ति होता है। गाने वालों ने फिर भैरवी राग छेड़ दी :-

सातों शब्द जो बाजते, घर घर होते राग।
सो मन्दिर खाली पड़े, बैठन लागे काग॥

ऊँचा महल चुनावते, करते होड़म होड़।
सुवरन कली ढलावते, गये पलक में छोड़॥
कबीर मन्दिर लाख का, जड़िया हीरालाल।
दिन चार का खेल है, विनस जायेगा काल॥
कबीर मरेंगे मर जायेंगे, कोई न लेगा नाम।
ऊजड़ जाय बसायेंगे, छोड़ बसन्ता गाम॥
रात गंबाई सोय कर, दिवस गंवाया खाय।
हीरा जन्म अमोल था, कौड़ी बदले जाये॥

मैंने इन दोहों को सुनकर अपने मन को दूसरी ओर लगाया। मन को स्वभावतः सैर सपाटों की रुचि थी। विचार हुआ चलो तनिक शाही किले की तो सैर करें जिस से मन बदल जाये और चित्त शान्त हो जाये।

मैं इस विचार को लेकर राज द्वार में जा पहुचा, जहां पंक्ति के पंक्ति हाथी झूम रहे थे। सेना की परेड का

समय था। जंगी बाजे बज रहे थे। राजा स्वयं सेनापति के रूप में अपने सैनिकों के कर्त्तव्य का निरीक्षण कर रहा था। यह वह व्यक्ति है जिसकी शक्ति के सामने संसार के शासक अपना मस्तक सम्मान के लिये झुकाते हैं। इसको कई स्थानों से कर मिलता है। बड़े बड़े धनी मानी उसके मैत्रित्व को तरसते हैं। उसने लक्ष्मी को अपनी दासी बना रखा है और वह विवश है कि शाही खजाने की शोभा और आत्मा होकर बैठी रहे। राजा की शक्ति का क्या ठिकाना है! सब कुछ इसके अधीन है। सब पर उसका शासन है। सब लोग राजा को अपना सरदार मानते हैं। सारे देश में उसका सिक्का जारी है। इसका कथन कानून है। मैंने सोचा कि निरी लक्ष्मी से क्या होता है। संसार में शक्ति व शासन भी कोई वस्तु हुआ करती है। जिसमें शक्ति है वही संपत्ति व प्रतिष्ठा

का उत्तराधिकारी है। जिसकी लाठी उसकी भैंस, जिसका राज उसकी दुहाई, जिसके हाथ में बल उसके हाथ में कल! देखो! यहाँ मूर्ख व पंडित सब राजा की बंदगी बजा लाते हैं। साधु फकीर भी उसके यहां याचक बन कर आाते हैं। निरा लक्ष्मी पुत्र बनना कुछ नहीं। यदि ईश्वर कृपा करे तो पार्वती पुत्र बनने से सब कुछ मिल रहता है। संयोग की बात जब यह तरंगें मन में उठ रही थीं मैं सैर करते करते किले की दूसरी ओर जा पहुंचा। सामने से एक सिपाही गाता हुआ आ रहा था-

1- जायेगा मैं जानी, मन रे तू जायेगा मैं जानी।
आवेगी कोई लहर लोभ की, डूबेगा बिन पानी॥

2- राज करंते राजा जैहैं, रूपबन्ती रानी।
वेद पढंते पंडित जैहैं, कथा सुनंते ज्ञानी॥

3- योगी जैहैं जंगम जैहैं, जैहैं मानी ध्यानी।
कहें कबीर सत भक्त न जैहैं, जिनकी मत ठहरानी॥
जायेगा मन जानी रे मन, तू जायेगा मन जानी॥

यह पद भी अपने प्रभाव से खाली नहीं था। सिपाही बेचारे को क्या पता कि वह क्या गा रहा है। कोई मनुष्य मुझसे पूछे कि इसको सुन कर यह क्या दशा हुई।

मैं सैर से वापस आया, अपने कमरे में बैठकर सोचने लगा। एक पुस्तक मेज पर रखी हुई थी। उस पर दृष्टि गई। उसमें बुद्धि विवेक की बातें भरी हुई थी। मैं ने उसको उठा लिया। दो चार पन्ने पढ़े। फिर मेज पर पुस्तक बंद कर के रख दी और विचार करता

हुआ उस परिणाम पर पहुंचा कि विद्या शक्ति है। माना कि सम्पत्ति का महत्व अधिक है, राजा की शक्ति भी अपना महत्व रखती है परन्तु विद्या के सामने इनका वश नहीं चलता; किन्तु यदि विचार पूर्वक देखा जाये तो संपत्ति व शक्ति विद्या ही के कृतज्ञ है। मनुष्य कितने अविष्कार करता है, इन के कारण इतना धन पैदा कर लेता है कि बादशाहों को भी प्राप्त नहीं होता। अविष्कार इस प्रकार के होते हैं कि एक एक मनुष्य को हजारों मनुष्यों की शक्ति प्राप्त हो जाती है। इन तोप बन्दूक रेल और जहाज इत्यादि सब के जन्म दाता विद्वान ही तो हैं। राजा को भी विद्वानों का सम्मान करना पड़ता है। वह विवश है कि अपनी सभा में विद्वान व योग्य मन्त्री नियत करे और उनसे समय समय पर परामर्श किया करे। उससे अधिक उत्तम-वस्तु है जिसने विद्या

प्राप्त कर ली है इसको सरस्वती भण्डार से प्रत्येक वस्तु प्राप्त हो जाती है। इसलिये लक्ष्मी पुत्र और पार्वती पुत्र बनने से सरस्वती पुत्र बनना कहीं बढ़ कर है, क्योंकि विद्या में सुख है। विद्वान अधिक सुखी होते हैं। धनाड्य को हजारों चिंतायें लगी रहती हैं। राजा को अपनी कौन कहे, दूसरों के दुख से दुखी होना पड़ता है। इसलिये लक्ष्मी भंडार पार्वती भंडार दुखों से खाली नहीं। सरस्वती भणडार फिर भी ग्रहण करने योग्य है जिससे विद्या का स्रोत निकलता है। वहां सुख अवश्य होगा और विद्या के कारण दुखों का नाश हो जायेगा। परन्तु ये विचार अधिक समय तक अपना काम नहीं करने पाये थे कि संत मत संग्रह भाग २ का पचीसवाँ पृष्ठ हवा के झोंके से खुल गया। इसमें लिखा हुआ था :-

उदय अस्त की बात कहत हूं, सब
का किया विवेका हो।
घाटे बाढ़े सब जग दुखिया,
क्या गृही वैरागी हो॥
सुख आचारज* दुख के डर से,
गर्भ से माया त्यागी हो।
जोगी दुखिया जंगम दुखिया,
तपसी को दुख दूना हो।
पंडित दुखिया मूर्ख दुखिया, सुख
से सब जग सूना हो।
सांच कहूँ तो कोई न माने, झूठ
कहा नहिं जाई हो॥
ब्रह्मा विष्णु महेश्वर दुखिया,
जिन यह राह चलाई हो।
अवधू दुखिया भूपति दुखिया,
रंक दुखी विपरीती हो॥

कहैं कबीर सकल जग दुखिया,
संत सुखी मन जीती हो॥

(* शुकदेव जी।)

है तो सच, इसमें सन्देह क्या है! जहाँ विद्या बुद्धि अधिक होती है वहां दुख अधिक होता है। किसी ने कहा है:-

दीवाना बाश-ता-गमे तू दगरा खुरन्द।
काँरा कि अल्क वेश, गमे रोजगार वेश॥

अर्थात् - दीवानापन का स्वभाव बना ले जिससे तेरे दुःख को दूसरे लोग सहन करें क्योंकि जिसको बुद्धि अधिक होती है वही कष्ट भी अधिक सहन करता है।

ध्यान व विचार का मैदान स्वयं विस्तृत होने लगा। विचार की दृष्टि फैल गई। एक महान विचारात्मक चित्र दृष्टि के सामने आ गया। नीचे की ओर समुद्र लहरें

मार रहा है। उसके बीच में विष्णु महाराज शेषनाग की शैय्या पर लेटे हुये लक्ष्मी की ओर देख रहे हैं। समुद्र की गहराई पानी की सेज, सांप की मित्रता! यह लक्ष्मी के प्रेम व प्यार का फल है। घबड़ा कर ऊँचे की ओर दृष्टि की। कैलाश की बर्फ से ढकी हुई चोटी पर उज्ज्वल हड्डियों का ढेर लगा दृष्टि पढ़ा। वहाँ साँप बिच्छू कनखजूरे फुंकार रहे थे। भूत और पिशाच नाच रहे थे। किसी के सिर नहीं तो किसी के हाथ नहीं, किसी के पांव नहीं। राम! यह क्या दशा है। यह राजा की महान शक्ति के चमत्कार हैं। योगिनी हाथ में मनुष्य का सिर लिये हुये रक्त पीती हुई चक्कर लगा रही है। किसी के गले में हड्डियों की माला है। किसी गरदन से पुरुषों की खोपड़ियाँ लटक रही हैं कुछ कहने योग्य नहीं है। ऐ कैलाशवासी शिव! महाप्रभु! यह क्या लीला है! दृष्टि को

यह दृश्य देखना रुचि कर नहीं हुआ। दृष्टि जो फिसली तो बीच आकाश में ठहरी। यहां सरस्वती महारानी का दर्शन हुआ। रूप रङ्ग चित्ताकर्षक, परन्तु किसी स्थान पर स्थिर नहीं। यह सरस्वती मनुष्य के हृदय में बसती है। परन्तु उसके आते ही किन्तु, सोच विचार, दुविधा, द्विचताई की अवस्था उत्पन्न हो जाती है। सरस्वती चैन नहीं लेने देती। प्रत्येक समय कहती रहती है-

बयक सायत बयक लमहा बयक दम।
दिगर गूँ मी शवद अहवाल आलम॥

अर्थात्- छिन-छिन और पल-पल इस संसार की अवस्था में परिवर्तन, होता रहता है।

जिसके प्राप्त हो जाने से मनुष्य का चित्त पारा बन कर प्रयेक समय चंचल रहता है, जिसके आते ही सोच विचार की अवस्था में मनुष्य फँस जाता है, क्या

उसको जीवन का आदर्श बनाना उचित है? इस प्रश्न का उत्तर तुम स्वयं अपने मन से पूछो।

मैं किसी की निन्दा नहीं करता, अपने अपने स्थान पर सब का महत्व है। हम लक्ष्मी भण्डार से आहार प्राप्त कर, पार्वती भण्डार से हाथ पाँव की शक्ति पाकर और सरस्वती भंडार से ध्यान व विचार की योग्यता प्राप्त करके किसी और उद्देश्य के अनुकरण में लगे हुये हैं। यह तो नहीं होता कि दिन भर खाते ही रहें, दिन भर डण्ड मुग्दर ही करते अथवा काम काज में लगे रहें और हम यह नहीं करते कि रात दिन पुस्तक हाथ में लिये हुए पढ़ते ही रहें और सम्पूर्ण आयु विचार व चिन्तन में व्यतीत कर दें। खाना, काम करना पढ़ना सब अच्छा है। इसके बिना कभी काम नहीं चलता। मूर्ख है वह मनुष्य जो लक्ष्मी का सम्मान नहीं करता। वह

अनादर व दारिद्र का जीवन व्यतीत करेगा। मूर्ख वह जो पार्वती माता का पवित्र दूध पीकर बल से काम नहीं लेता। वह निर्बल बनकर जहाँ तहां ठोकरें खाता रहेगा और समय उसको अपने पाँव का फुटबाल बनायेगा और मूर्ख है वह मनुष्य जो सरस्वती की दात के स्रोत से दात प्राप्त नहीं करता। इस, मूर्ख को सदैव पशुवत जीवन और दासत्व की अवस्था में पढ़ा रहना पड़ेगा। मैं सिर झुकाता हूँ लक्ष्मी को; मैं प्रणाम करता हूँ पार्वती को, मेरा नमस्कार है सरस्वती के चरणों को। जिस प्रकार माता संसार में खिला पिला कर बालक को काम काज के योग्य बनाती है ऐसे ही मैं भी लक्ष्मी, पार्वती और सरस्वती की गोद में पल कर किसी काम के योग्य बनने की इच्छा रखता हूं। वह काम क्या है? वह काम यह है कि जिस शक्ति से लक्ष्मी, पार्वती के भंडारों को पुष्टता

प्राप्त होती है, जो इन सब का स्रोत है उसकी ओर ध्यान दिया जाये।

खुरदून बराये जीस्तिन व जिक्र करदनास्त।
तू मोत किद कि जीस्तिन अज़ बहरे खुरदनास्त॥

कहा गया है कि उसके रोम रोम में ब्र्ह्माण्ड है। उसके एक-एक रोम में करोड़ों ब्र्ह्मा, करोड़ों विष्णु और करोड़ों शिव अपनी अपनी शक्तियों को लिये हुए मौजूद हैं। जिसके एक रोम में अरब खरब सूर्य का प्रकाश है, जिसकी प्रशंसा सरस्वती और ब्र्ह्मा भी नहीं कर सकते, यह विश्वेश्वर है और उसके भंडार का नाम विश्व भंडार है। सारी शक्तियों को इसकी शक्ति से शक्ति मिलती है और शक्तिशाली बनती हैं। इसके हजारों हाथ हैं। इसकी आँखे लाखों व करोड़ों सूर्य चांद हैं। न इसका आदि है न इसका अन्त है। इसका शिर दिव्य है, इसका पाँव

पृथ्वी है इसका मध्य भाग अन्तरिक्ष है। सारे ऋषी, मुनि, सिद्ध साधक इसमें बसते हुये स्तुति पाठ पढ़ा करते हैं। वह एक है और अनेक रूप में दिखाई दे रहा है। सब इससे निकलते हैं और फिर इसमें जा समाते हैं। इसमें सबके लिए स्थान है। वह एक है और ऋषी इसको अनेक नामों से स्मरण करते हैं। योगी योग में इसका ध्यान करते हैं। ज्ञानी ज्ञान से इसको जानना चाहते हैं। यह सारा संसार जो कुछ देख पड़ता है और जो देख नहीं पड़ता सब इसमें है और सब इससे हैं शरीर जो कोई इस विश्व भंडार से संबंध रखते हैं उनको किसी वस्तु की कमी नहीं होती। वह एक था। उसने सोचा मैं दो हो जाऊँ, वह दो हो गया। फिर वह हजारों लाखों करोड़ों रूपों में विभक्त हो गया जो कोई उसको अपना

आदर्श बना कर चलता है वह अमर कीर्ति को प्राप्त कर लेता है। हाँ, अमर कीर्ति को प्राप्त कर लेता है।

जिन्दगी मकसूद बहरे बंदीगस्त।
जिन्दगी बे बंदगी शरमिन्दी गस्त॥

अर्थात् - जीवन बन्दगी (भजनोपासना) के लिये है और बिना भजन बन्दगी के जीवन लज्जा की बात है। तुम जो सार वस्तु के प्रेमी हो, संपत्ति स्वास्थ्य और बुद्धि से लाभ उठाकर इस ओर झुको। उसकी समीपता को अपने जीवन का उद्देश्य बना लो और फिर तुम्हारी विजय होगी। तुम कभी परास्त न होगे क्यों कि इस एक में ही सब कुछ है। इस एक राजा के हाथ में आ जाने से सब पर स्वयं अधिकार मिल जाता है और फिर सीधे मनुष्य लक्ष्मी, पार्वती व सरस्वती भंडार के सार को प्राप्त कर सकता है।

एक नाम को जानकर, दूजा दिये बहाय।
जप, तप तीर्थ ब्र्त नहिं, सतगुरु चरण समाय।
सब आये उस एक में, डाल पात फल फूल।
अब कहो पाछे क्या रहा, गह पकड़ा जब मूल॥
जो यह एकै जानिया, तो जाना सब जान।
जो यह एक न जानिया, तो सबही जान अजान।

[कबीर साहब]

ईश्वर तुम्हारा कल्याण करे और तुमको अपने चरणों का प्रेम प्रदान करे।

आत्म भंडार

उलट सामना आप में, प्रगटी जोत अनन्त।
साहब सेवक एक सङ्ग, खेले सदा बसन्त॥
संशय करूँ न मैं डरूँ, सब दुख दिये निवार।
सहज सुन्न में घर किया, पाया नाम अधार॥
बिन पावन का पंथ है, बिन बरती का देश।
बिना देह का पुरुष है, कहैं कबीर संदेस॥

[कबीर साहब]

आज तक जो कुछ कहा गया है, सबल ब्र्ह्म के शासनाधिकार की दृष्टि से कहा गया है। इसी में विराट है इसी में हिरण्यगर्भ है, इसी में सरस्वती, लक्ष्मी और पार्वती का भंडार है और यही विश्व भंडार भी है। आगे जो कुछ कहा जायेगा वह शुद्ध ब्र्ह्म है। यह वर्णन करने में नहीं आता। इन्द्री और मन की इस तक गम नहीं है।

यह केवल अनुभव मात्र से कुछ अनुभव किया जाता है। परन्तु इसके विषय में यह कहना कि वह हमारे अनुभव में आ जाता है, निरर्थक है। कोई क्या कहे और क्या न कहे।

तुमने चार भंडार की विचित्र व विलक्षण सामग्री देखी। इनसे विचित्र और क्या वस्तु हो सकती है और सब से विचित्र और आश्चर्य की बात है कि यह सब भण्डार तुम्हारे तीन हाथ के इसी शरीर में विद्यमान हैं। जो ब्रह्माण्ड में है वही पिंड में है इस लिये तुमको विश्वास कर लेना चाहिए कि तुम्हारे अपने शरीर में ही सब कुछ है। बाहर कहीं कुछ खोज करने की आवश्यकता नहीं है। हाँ, केवल इतनी आवश्यकता है कि तुम अपने उद्योग से काम करते रहो। अपनी दबी हुई शक्तियों को उत्तेजित करो, मन को उभारो,

विचार को क्रियात्मक क्षेत्र में लाओ। सब कुछ तुम्हारा हो जायेगा। तुम अपने भीतर दबे हुये खजाने को नहीं जानते। धोखे में पढ़े हो। इसलिये दरिद्री और कंगाल हो। जैसे किसी राजा के पुत्र के घर बहुत कुछ खजाना पड़ा है परन्तु मूर्खता व अनभिज्ञता से वह विपत्तियों का लक्ष्य बना रहे, वही तुम्हारी दशा है। जिसके भीतर गंगा, जमुना, सरस्वती लहरें मारती हों, यदि वह प्यासा रहे तो बड़े आश्चर्य की बात है। परन्तु तुम्हारी स्थिति वास्तव में इसी प्रकार है जिसके भीतर अमृतधार बह रही है और फिर भी उसको जिन्दगी (जीवन) के लाले पड़े हों। वह वास्तव में तुम हो। अविद्या और अज्ञान ने इस प्रकार तुमको दबोच रखा है कि तुम अपनी असलियत की ओर किंचित ध्यान नहीं देते। तुमको अपने निज आतमभंडार

को पता नहीं है कि तुम्हारे भीतर क्या क्या अमूल्य पदार्थ मौजूद हैं।

हमने तुमसे प्रारम्भ में कहा था कि राम और कृष्ण सरीखे पवित्र व्यक्तित्व के उत्पन्न करने वाले तुम हो। उस समय तुमको बड़ा आश्चर्य हुआ होगा किन्तु यह मिथ्या नहीं है सत्य है और अक्षरशः सत्य है और इतना ही क्यों? यदि तुम चाहो तो सब कुछ इससे भी कहीं बढ़कर काम कर सकते हो। तुम्हारी शक्ति अपरमित है। तुम्हारी शक्ति अपार और अनन्त है। तुम्हारे बल की थाह नहीं है परन्तु शर्त तो यह है कि तुम इस को समझो, बूझो, जानो और इससे काम ले सको।

हम अधिक नहीं कहना चाहते परन्तु फिर भी इतना अवश्य कहेंगे जिससे कम से कम तुमको इतनी तो समझ आ जाये कि यह निरी गप नहीं हांकता किन्तु

सच भी कहता है। राम कृष्ण महान आत्मा वाले व्यक्ति किस प्रकार संसार में आते हैं।

इस सम्बन्ध में ध्यान पूर्वक कुछ बातों को सुनो। तुम्हारी समझ में आ जायेगा।

जिस समय ससार में किसी प्रकार का अन्याय अथवा दुराचार का प्रवाह हो जाता है, मनुष्य की अधिकांश संख्या इस कष्ट से पीड़ित हो जाती है और उसके हृदय में यह विचार उत्पन्न हो जाता है कि कोई महान शक्ति हम में जन्म धारण कर इस अप्रिय अवस्था से मुक्ति दिलाये। पहिले विचार की लहर थोड़े आदमियों के मन में उत्पन्न होती है। फिर यह सारे आकाश मण्डल में जो हमारे इर्द गिर्द है फैल जाती है। दूसरे लोग भी उसी विचार के बन जाते हैं; क्योंकि विचार की धारें जहाँ-जहाँ समान विचार और अनुकूल प्रकृति पावेंगी

वह अपना प्रभाव उत्पन्न किये बिना न रह सकेंगी। यह प्राकृतिक नियम है। यदि किसी सितार में ऊपर नीचे दो परदे हों और स्वर मिलाने के बाद यदि ऊपर के तारों को छेड़ दिया जाय तो नीचे के स्वयं ही बजने लगेंगे। तुमको आश्चर्य होगा कि क्या माजरा है। केवल एक पर्दे के तार छेड़े गये परन्तु सब के सब बज रहे हैं। इसका कारण केवल यह है कि तारों में पारस्परिक सम्बन्ध, अनुकूलता और समानता है। एक को बजाने से सब बजने लगते हैं। इसी प्रकार से जब किसी महान पुरुष में किसी विशेष भाव का विचार दृढ़ हो जाता है तो वह अपने समीपवर्ती अनुकूल और समान प्रकृति वालों को प्रभावित किये बिना नहीं रह सकता। बजाया था ऊपर का तार, बजने लगे नीचे के तार भी और तीव्र स्वर से शब्द हुआ। इसी प्रकार विचार उत्पन्न हुआ

कि केवल एक के प्रभावित होने से सब प्रभावित हो जाते हैं और विचार की सङ्गठित धार दृढ़ होकर वह ऐसे केन्द्र की ओर आकर्षित हुई जहां इस विचार के क्रियात्मक रूप धारण करने की सामग्री विद्यमान थी। तुम नहीं जानते कि यह नियम किस प्रकार काम करता है परन्तु यह वास्तविकता है। सम्भव है कि जिस प्रकार के उदार दानी की आवश्यक्ता किसी विशेष गोलार्द्ध में लोग अनुभव करते हों परन्तु वह उसमें विद्यमान नहीं है, फिर भी यदि इस प्रकार का कोई शक्तिशाली प्राणी किसी और लोक जैसे चन्द्रलोक, सूर्यलोक इत्यादि में विद्यमान है तो हमारे विचार जाकर उसके हृदय को स्पर्श करेंगे। वह हमारे पास आने का इच्छुक होगा और हम में जन्म लेकर हमारी मुक्ति की सामग्री एकत्र कर देगा। यह नियम किस प्रकार अपना काम करता है

अभी इसकी व्याख्या का समय नहीं आया है परन्तु यह असलियत है कि हमारे विचार इस महान परुष को हम में उत्पन्न कर देते हैं। यह केवल आवश्यकता का प्रश्न है और तुम भूल कर भी न विचार करो कि यह प्रकृति अवश्यकता की सामग्री उत्पन्न, करने में भूल करेगी। "डिमाँड आर सप्लाई" का सिद्धान्त निरर्थक नहीं रहता। यह मानुषिक वृत्तियों का सदैव अध्ययन करता रहता है। भीष्म पितामह ने इसी कारण युधिष्ठिर से बार-बार कहा था कि "ऐ धर्मराज! तुम कभी दुखियों को न सताना। इनकी आह बुरी होती है।

मोटी आह गरीब की, हरि सों सही न जाये।

यह डिमाँड और सप्लाई का प्रश्न है। हिन्दुओं को सदैव विश्वास रखना चाहिये कि इनको किंचित, अधीर होने की आवश्यकता नहीं है। यह सृष्टि ईश्वर की

है। जब और जिस समय जैसे मनुष्य की आवश्यकतायें होती हैं वैसा काम हुआ करता है।

राम और कृष्ण की हैसियत और योग्यता के मनुष्य क्यों विशेष गोलार्द्धों से आते हैं समझने और सोचने का विषय है। हम चाहते हैं कि अच्छी तरह खोलकर इसको कह दें परन्तु सन्देह है कि लोग इसको न समझेंगे व भ्रम फैला देंगे। फिर भी ऐसे मनुष्य मिलेंगे जो हमारे मन्तव्य को समझ जायेंगे और हम इस विचार से उन्हीं थोड़े से व्यक्तियों के लिये लिखते हैं।

प्राकृतिक सिद्धान्त हैं कि प्रत्येक वस्तु के भंडार हुआ करते हैं और इन्ही भंडारों द्वारा बाँट की जाती है जैसे सूर्य गर्मी का भंडार है। गर्मी और सर्दी इससे बंटती है। चन्द्रमा शीतलता और जीवन का भंडार है। शीतलता और जीवन इसके द्वारा प्राप्त होता है। संसार

में भी अग्नि और जल इत्यादि के भंडार तुमको जहाँ तक मिलेंगे, इनसे बंटवारा विभाजन का प्रश्न हल किया जाता है। शाही खजाना भंडार है रुपया पैसा का, इससे रुपया पैसा बँटता रहता है। राजसी सेना भंडार है शक्ति और बल का। आवश्यकतानुसार इससे शक्ति भेजी जाती है। पाठशालाएं और कालेज भंडार हैं विद्या व कला कौशल के। इनके द्वारा विद्या बुद्धि वाले अन्य स्थानों पर भेजे जाते हैं। यथा। यह भंडार का सिद्धान्त प्रत्येक स्थान पर दृष्टि गोचर होता है।

तुम्हारे शरीर में भी प्रत्येक स्थान पर इसी प्रकार के अनेकों भंडार हैं। हाथ शक्ति का भंडार है। मस्तिष्क योग्यता और विचार का भण्डार है। इत्यादि। जब तुमको आवश्यकता होती है स्वयं ही केवल इच्छा मात्र से तुम अपने चित्त की वृत्ति अग्रसर कर अपनी आवश्यक

सामग्री ले आते हो। यह एक गूढ़ रहस्य (मुअम्मा) हल नहीं होता। इसके हल करने की आवश्यकता है। चित्त, स्वयं मस्तिष्क की ओर आकर्षित हुआ और वहाँ से विशेष प्रकार की शक्ति लेकर इसको हल कर दिया। कदाचित यदि तुम मन व इसकी गति पर दिन प्रतिदिन विचार करते रहते तो सुगमता से मेरे आशय को समझ सकते। तम्हारा यह शरीर चूंकि छोटा ब्र्ह्माण्ड है इसलिये बड़े ब्र्ह्माण्ड के सारे भंडार इसमें विद्यमान हैं।

अब थोड़ा बड़े ब्र्ह्माण्ड की ओर जो हमारी परिमित दृष्टि के सामने है चलो। क्या देखते हो, इसमें जहाँ तहाँ भंडार स्थिर हैं। सूर्य गर्मी का और बिजली का चुम्बक समान आकर्षण का भंडार है। इसमें प्रकाश है। इसकी उपमा हमारे, नेत्रों से है और यदि विचार करोगे तो तुम देखोगे कि हम जिसको चाहें केवल आँख

भर देख लेने से गर्मी व उष्णता दें। उसमें उत्साह और साहस की भावनायें उत्तेजित कर दें। कुदृष्टि की बिजली से मार दें। आंखें लड़ा कर उसको अपनी ओर खींच लें। क्यों सच है या नहीं? चन्द्र भंडार है अमृत का, शीतलता का, माद्दा का। इसमें अमृत है। इसका सम्बन्ध तुम्हारे हृदय से है और यही कारण है कि जब तुम सहानुभूति करने पर आते हो, केवल अपने विचार मात्र से जीवन को सन्तुष्टि प्रदान करते हो और तुम्हारे विचार ही इसके साधन पैदा कर देते हैं। बाह्य रचना में मंगल शक्ति का, बल का भंडार है। उस कर्त्तव्य का पालन तुम्हारे हाथ द्वारा होता है। बाहर बृहस्पति भंडार है, विद्या बुद्धि का। तुम्हारा मस्तिष्क इस शरीर में उसकी प्रधानता का दम भरता है। इसी प्रकार तुम्हारे सारे अंगों की व्यवस्था है। जो बाहर है वही भीतर है। जो भीतर है वही बाहर है।

जिस प्रकार तुम आवश्यकतानुसार चित्त की वृत्ति को चलायमान कर अपने शरीर के भिन्न भिन्न भंडारों से काम लेते हो; उसी प्रकार जब किसी मंडल के मनुष्य विचार शक्ति की सहायता से अपने में किसी विशेष अस्तित्व के पैदा करने की इच्छा करते हैं तो वह इच्छा ब्र्ह्मांड के उस जैसे गोलार्द्ध से जाकर टकराती है और वहाँ से जो आत्मा नीचे उतर कर तुम्हारे मंडल में उत्पन्न होता है उसमें उसी प्रकार की सारी विशेषताएं विद्यमान रहती हैं। जैसे यदि माता पिता इच्छुक हों कि उनकी संतान योग्य पढ़ी लिखी हो तो वह अनजाने में अपने शरीर की उस शक्ति के भंडार को विचार द्वारा चलायमान करते रहेंगे जिसका सम्बन्ध योग्यता और विद्वता से है और वह स्वयं उनका मस्तिष्क है। बार बार एक ही विचार के सोचते रहने से उसमें स्वयं यह

गुण पैदा होंगे और उनके गुणों को देख कर उस प्रकार की आत्मा उनकी और आकर्षति होकर उनकी सन्तान बनेगा। इसी प्रकार यदि किसी जाति व देश के सङ्गठित विचार के मनुष्य इच्छुक हों कि उनका मुक्त दाता विद्वान वीर और योग्य हो, तो उनके विचार की दृढ़ धारना अनभिज्ञता में बृहस्पति मंडल को स्पर्श करती रहेगी और उनकी भावनाओं के सम्मान में बृहस्पति मंडल का आत्मा उनमें जन्म धारण कर उनके मुक्ति के प्रश्न को हल कर देगा। यह एक उदाहरण है। इस उदाहरण से सुगमता से समझ में आ जायेगा कि किस प्रकार हम ब्र्ह्म लोक, विष्णु लोक और सूर्य लोक की आत्माओं को अपने मंडल में बुला सकते हैं।

सारांश जो विचारवान हैं जो अपनी आत्मा का कुछ भी परिचय रखते हैं वह इसी भांति सफलता के साथ अपना काम कर लेते हैं।

सरस्वती भंडार से विद्या, लक्ष्मी भंडार से धन, पार्वती भंडार से हर प्रकार की सिद्धि व शक्ति प्राप्त की जा सकती है। इनके प्राप्त करने का भेद भी बता दिया गया। मनुष्य जब दृढ़ता से, अटलता से, दृढ़ संकल्प शक्ति से किसी बात की इच्छा करेगा वह वस्तु अवश्य उसको प्राप्त होकर रहेगी इसमें किंचित भी संदेह नहीं है, क्योंकि यह प्रकृति केवल पुरुष के भोग के लिये है यह अपने लिये नहीं है। मेज, कुर्सी, मकान, मुल्क माल सब प्रकृति के रूप हैं। इनकी उपस्थिति स्पष्ट सिद्ध कर रही है कि वह किसी और के लिये हैं अपने लिये नहीं हैं। यह और कोई मनुष्य दूसरा नहीं है। तुम स्वयं ही

हो। तुम पुरुष हो, तुम आत्मा हो, तुम रूह हो। सारा खेल तुम्हारे लिये बना है। यह सब तमाशा तुम्हारे मनोविनोद के लिये है। यदि तुम अपनी हैसियत भूल जाओ तो यह किसी और का नहीं तुम्हारा ही दोष है। बन्धन केवल अज्ञानी के लिये है। जो जानता है उसको कोई बाँध नहीं सकता। जब हम समझ गये कि कोई कुर्सी हमारे बैठने के लिए है और उसका आशय केवल इतना ही है तो फिर हमको इसके साथ सम्बन्ध भी इतना ही रहेगा और यह हमको अपने साथ न बाँध सकेगी। यदि हम इससे बँधते हैं तो फिर हमको मुक्त कोन कर सकेगा। इसलिये आवश्यकता है कि सरस्वती से विद्या, लक्ष्मी से सम्पत्ति, पार्वती से स्वास्थय व विश्व भंडार से सारी सामग्री लेते हुए इससे लाभ उठाते हुए यह भी सोचते रहो कि यह क्या हैं। हमारा इनके साथ क्या सम्बन्ध है

और केवल इतना ही ज्ञान तुमको आत्म-भंडार को प्राप्त करा देगा, जहाँ फिर तुमको किसी की भी आवश्यकता न रह जायेगी। तुम अजाच हो जाओगे। तुम कृत्य कृत्य बन जाओगे। तुम में कोई कमी न रहेगी।

यह तुम्हारा आत्मा सोचने और समझने के योग्य है- "ए मैत्री! जो इसको जान लेता है फिर उसको किसी जानने की आवश्यकता नहीं रहती।" जिसको आत्मा का ज्ञान हो जाता है वह मुक्त, हो जाता है और उसकी अवस्था ही कुछ और हो जाती है।

हमने केवल अपने स्वार्थ के विचार से जीवन प्रारम्भ किया। लक्ष्मी माता की छाती से दूध पीकर, पार्वती माता से बल पाया और सरस्वती देवी से ज्ञान व योग्यता प्राप्त की। फिर विश्व भंडार की ओर आकर्षित होकर सब कुछ प्राप्त कर लिया। अन्त में आत्मा का

ज्ञान प्राप्त करके परमात्मा से ऐसा संबंध किया कि हममें और उसमें द्वैतभाव न रह गया। हम उससे मिलकर एक हो रहे हैं। भक्ति की, कर्म की, ज्ञान की, योग की अन्तिम अवस्था यही है कि मनुष्य का आत्मा इतना विस्तृत हो जाये कि उसमें सब के लिये स्थान हो जाये और यह बात केवल उसी समय सम्भव है जब वह अपने सामने इस सर्वव्यापक सर्वज्ञ व पूर्ण के इष्ट को सामने रख कर इस प्रकार सच्चाई के साथ इसका ध्यान करे कि अपने परिमित व्यक्तित्व का तुच्छ भाव जाता रहे। तब उसको ऐकत्ववाद और (तौहीद) का दर्जा प्राप्त होगा और फिर उसके लिये कुछ करना धरना, कहना बाकी न रहेगा। अनाशवान जीवन उसके भाग में आवेगा और वह अजर अमर हो जायेगा। यह न समझो कि तुमने अपने आपको बिल्कुल खो दिया किन्तु तुम

अंश रूप से पूर्ण रूप में लीन हो गए। अब तक तुम बार बार मरते और जीते रहे हो क्योंकि मरना और जन्मना परिमित मण्डल का काम है। अब तुम अपरिमित हो गये। कहां का मरना और कहाँ का जन्मना।

मन की मनसा मिट गई अहं गई सब छूट॥
गगन मंडल में घर किया, काल रहा सिर कूट॥
जा मरने से जग डरे, मेरे मन आनन्द।
कब मरिहों कब पाइहों, पूरन परमानन्द।

मैंने जो कुछ ऊपर वर्णन किया है उसको अधिकाँश जोरदार, शिक्षा प्रद और प्रभावशाली शब्दों में इस प्रकार वर्णन किया है कि इसको यदि तुम ध्यानपूर्वक पढ़ोगे तो बिना लाभ उठाये वञ्चित न रह सकोगे। यह परम संत कबीर साहब की बाणी है। वह कहते हैं:-

१- रोड़ा हो रह बाट का, तज आपा अभिमान।
लोभ मोह तृष्णा तजे, ताहि मिले निज नाम।

२- रोड़ा भया तो क्या भया, पन्थी को दुख दे।
साधु ऐसा चाहिये, जेसे पेड़ी खेह॥

३- खेह भई तो क्या हुआ, उड़ उड़ लागे संग।
साधु ऐसा चाहिये, जैसा नार निपंग।

४- नीर भया तो क्या भया, जो ताता सीरा होय।
साधु ऐसा चाहिये, जो हर ही जैसा होय॥

५- हर भया तो क्या हुआ, जो कर्त्ता धरता होय।
साधु ऐसा चाहिये हर भज निर्मल होय॥

६- निर्मल भया तो क्या भया, जो निर्मल माँगे ठौर॥
मल निर्मल से रहित हैं, ते साधु कोई और॥
यह आत्मिक इष्ट है, यही आत्मिक उत्कर्ष है।

गुरु तुम्हारा कल्याण करे।

समाप्त।